▪त्योहार -: सागा दावा

▪राज्य -: सिक्किम

·परिचय :- सिक्किम की संस्कृति अद्वितीय है; यह उत्तर पूर्व भारत के सबसे बेशकीमती रत्नों में से एक है। यहाँ का पवित्र सागा दावा उत्सव एक अद्भुत भीड़ खींचने का काम करता है, जो दुनिया भर से पर्यटकों और तीर्थयात्रियों को आकर्षित करता है। जैसा कि सिक्किम राज्य अपनी जीवंत संस्कृति के लिए प्रसिद्ध है, जिसमें से सागा दावा महोत्सव आज तक के सबसे प्रमुख समारोहों में से एक है। यह गौतम बुद्ध के जन्म, आत्मज्ञान की ओर उनकी यात्रा और भौतिक संसार से उनकी मुक्ति की अंतिम उपलब्धि का प्रतीक है, यह उनके जीवन के सबसे उल्लेखनीय क्षणों का उल्लेख करता है।

सिक्किम में सांस्कृतिक रूप से समृद्ध छुट्टियां बिताने की इच्छा रखने वाले, ध्यान दें कि सागा दावा सिक्किम के सबसे अच्छे त्योहारों में से एक है। यह लोगों, उनके रीति-रिवाजों, विश्वासों और उनकी जीवन शैली के बारे में अद्वितीय अंतर्दृष्टि प्रदान करता है। सबसे बढ़कर, यह रंगों, वेशभूषाओं और साज-सामान से भरपूर एक शानदार आयोजन है।

· सागा दावा :- सागा दावा (बुद्ध पूर्णिमा) को अनौपचारिक रूप से "बुद्ध का जन्मदिन" कहा जाता है, यह वास्तव में थेरावा परंपरा में गौतम बुद्ध के जन्म, ज्ञान (निर्वाण), और मृत्यु (परिनिवाण) का जश्न मनाता है।

यह उत्सव ज्यादातर गंगटोक में जुलूसों, प्रार्थनाओं, और जरूरतमंदों के लिए भिक्षा देने के रूप में मनाया जाता है। यह माना जाता है कि इस दिन बुद्ध का जन्म हुआ था, उन्होंने ज्ञान प्राप्त किया, और निर्वाण प्राप्त किया। सागा दिवस को "गरीब दिवस" भी कहा जाता है क्योंकि यह लोगों को वंचितों के साथ भोजन और उपहार साझा करने के लिए प्रोत्साहित करता है।

इसके अलावा, इस त्यौहार को "मेरिट डे" भी माना जाता है क्योंकि ऐसा माना जाता है कि सागा दावा के महीने में किए गए सभी कार्य कई गुना बढ़ जाते हैं।

लोग त्योहार के दौरान मांस खाना भी छोड़ देते हैं, जिससे जानवरों को प्रकृति में स्वतंत्र रूप से घूमने का मौका मिलता है।

·सिक्किम में सागा दावा महोत्सव :-

यह सिक्किम के सबसे प्रसिद्ध और सबसे बड़े त्योहारों में से एक है,जो हर साल बड़े उत्साह और उमंग के साथ मनाया जाता है। यह त्योहार महायान बौद्ध धर्म के अनुयायियों के लिए सबसे महत्वपूर्ण और पवित्र है। जीवंत बौद्ध संस्कृति की झलक देखने की चाहत रखने वाले सभी यात्रियों और सांस्कृतिक प्रेमियों के लिए, निस्संदेह, सागा दावा विभिन्न धार्मिक समारोहों और सड़क जुलूसों का दृश्य अनुभव प्रदान करने वाला एक आदर्श मंच प्रदान करता है। हर साल, महायान बौद्ध धर्म के अनुयायी पूर्णिमा अवधि के दौरान भगवान बुद्ध के आध्यात्मिक जागरण का जश्न मनाते हैं। अनुष्ठान बौद्ध चंद्र कैलेंडर के चौथे महीने में शुरू होते हैं, जो अंग्रेजी कैलेंडर के अनुसार, मई के अंत और जून की शुरुआत के बीच आता है।

·सागा दावा महोत्सव का इतिहास :-

हालांकि सागा दावा या ट्रिप ब्लेस्ड फेस्टिवल का इतिहास पिछली कई शताब्दियों से पुराना माना जाता है। आज, यह त्योहार पूरे देश में मनाया जाता है। अलग-अलग देशों में अलग-अलग तरीकों से और अलग-अलग नामों से; जबकि तिब्बती और सिक्किमवासी इसे सागा दावा के रूप में मनाते हैं, सिंगापुर, इंडोनेशिया, मलेशिया और श्रीलंका जैसे कई दक्षिण पूर्व एशियाई देश इसे वेसाक दिवस के नाम से मनाते हैं। और उत्तर पूर्वी क्षेत्रों को छोड़कर पूरे भारत में इस त्योहार को आमतौर पर बुद्ध पूर्णिमा के रूप में जाना जाता है।

· सागा दावा महोत्सव की मुख्य विशेषताएं और महत्वपूर्ण अनुष्ठान :-

सागा दावा का सबसे बड़ा आकर्षण महायान बौद्धों द्वारा मठों में मक्खन के दीपक जलाना है, जो भगवान बुद्ध के प्रति उनकी आज्ञाकारिता को दर्शाता है, बुद्ध के बारे में माना जाता है कि उन्होंने जीवन में लोगों के मार्ग को रोशन किया था। समारोह के बाद, गंगटोक की सड़कों पर उदार बौद्ध भजनों और मंत्रोच्चारण के बीच, त्सुक-ला-लैंग मठ से शुरू होने वाली एक भव्य प्रतियोगिता, जिसका नेतृत्व पवित्र ग्रंथ और भगवान बुद्ध के चित्र ले जाने वाले भिक्षुओं द्वारा किया जाता है, सभी दर्शकों के लिए एक सम्मोहक दृश्य प्रदान करता है।

· सागा दावा महोत्सव की अवधि :-

सागा दावा का भव्य कार्निवल हर साल बौद्ध चंद्र कैलेंडर के चौथे महीने की पूर्णिमा पर आयोजित किया जाता है। पूरे महीने के दौरान "कजुर ग्रंथ" नामक पवित्र ग्रंथों का पाठ और मक्खन के दीपक जलाने सहित कई धार्मिक अनुष्ठान होते हैं। अंतिम जुलूस के दिन भक्त आशीर्वाद प्राप्त करने और भगवान के प्रति अपना आभार व्यक्त करने के लिए गंगटोक की सड़कों पर बड़ी संख्या में

इकट्ठा होते हैं।इस दिन भिक्षा और दान देना भी काफी आम है क्योंकि इस पवित्र महीने के दौरान किए गए परोपकार के कार्यों का भविष्य में फल मिलता है।

· सागा दावा महोत्सव की विधि :-

सागा दावा के अवसर पर तिब्बती बौद्ध, मठो और मंदिरों में घूमते हुए अपना दिन व्यतीत करते हैं और मंत्रोच्चारण करते हुए गरीबों को दान देते हैं ।

पूर्वी लद्दाख़ में हनले नदी घाटी में रहने वाले चांगपा जैसे खानाबदोश चरवाहा समुदाय के लोग जो मूलत बौद्ध हैं, के लिए सागा दावा त्योहार का खास महत्व है ।

त्योहार के दिन सुबह के 8 बजे गांव के स्थानीय मठ से शोभायात्रा निकलती है।

आयोजन समिति के प्रमुख दोरजे बुद्ध की प्रतिमा वाली इस शोभायात्रा की अगुआई करते हैं । महिलाएं परिधान के रूप में पारंपरिक गाउन पहनती हैं, जिसे सुलमा कहा जाता है ।

सुलमा के साथ वे माथे पर नेलेन (टोपी) भी पहनती हैं, गाड़ी को त्योहार के झंडों से अच्छी तरह सजाया जाता है, जिनपर प्रार्थनाएं लिखी हुई होती हैं।

सजाए जाने के बाद गाड़ी एक रंग-बिरंगे रथ की तरह दिखती है, इसमें बुद्ध प्रतिमा को एक मेटाडोर गाड़ी के ऊपर रखा जाता है, जो एकखास क्रम में लगे त्योहार के झंडों से अच्छी तरह सजाई जाती है और उन पर प्रार्थनाएं लिखी हुई होती हैं ।

हर झंडे का प्रत्येक रंग एक अलग तत्व का प्रतिनिधित्व करता है, जो संतुलन को दर्शाने के लिए एक साथ इस्तेमाल किए गए हैं।

▪भारतीय शास्त्रिय नृत्य -: मोहिनीअट्टम

राज्य -: केरल

परिचय -: भारत के केरल राज्य के दो शास्त्रीय नृत्य मोहिनीअट्टम व कथकली काफी लोकप्रिय हैं। मोहिनीअट्टम नृत्य शब्द मोहिनी के नाम से बना है।

हिन्दुओं के देव भगवान विष्णु ने मोहिनी रूप इसलिए धारण किया था ताकि बुरी ताकतों के ऊपर अच्छी ताकत की जीत हो सके।

मोहिनीअट्टम परंपरागत रूप से व्यापक प्रशिक्षण के बाद महिलाओं द्वारा किया जाने वाला एकल नृत्य है।

· क्या है मोहिनीअट्टम ?

पौराणिक मोहिनीअट्टम जिसको मोहिनी अट्टम भी बोला जाता हैं यह "मोहिनी" शब्द से बना है जो भारतीय पौराणिक कथाओं में भगवान् विष्णु का एक प्रसिद्ध नारी अवतार हैं।

मोहिनीअट्टम की शाब्दिक व्याख्या ‘‘मोहिनी’ ’ के नृत्य के रूप में की जाती है, हिन्दू पौराणिक गाथा की दिव्य मोहिनी, केरल का शास्त्रीय एकल नृत्य-रूप है ।

मोहिनी का अर्थ एक "दिव्य जादूगरनी या मन को मोहने वाला" होता है।

जिसका अवतरण देव और असुरों के बीच युद्ध के दौरान हुआ था जब असुरों ने अमृत के ऊपर अपना नियंत्रण कर लिया था। मोहिनी ने वो अमृत असुरों को मोह में लेकर देवताओं को दे दिया था।

पौराणिक गाथा के अनुसार भगवान विष्णु ने समुद्र मन्थन के सम्बंध में और भस्मासुर के वध की घटना के सम्बंध में लोगों का मनोरंजन करने के लिए ‘‘मोहिनी’ ’ का वेष धारण किया था ।

यह नृत्य केवल स्त्रियों द्वारा निष्पादित किया जाता है।

· मोहिनीअट्टम का इतिहास -:

मोहिनीअट्टम एक भारतीय शास्त्रीय नृत्य है जिसकी जड़ें भारतीय कला की जननी समझी जाने वाली पुष्तक नाट्य शास्त्र से जुड़ी हैं जिसके रचयिता प्राचीन विद्वान भरत मुनि हैं।

रेजिनाल्ड मैसी के अनुसार, मोहिनीअट्टम के इतिहास के बारे में कुछ स्पष्ट नहीं है। केरल में यह नृत्य शैली विकसित और लोकप्रिय हुई है।

· **मोहिनीअट्टम नृत्य की विशेषता :-**

मोहिनीअट्टम में शारीरिक अभिनय और चेहरे के भाव शामिल हैं जो प्रकृति में अधिक स्त्रैण हैं। इसकी विशेषता बिना किसी अचानक झटके अथवा उछाल के लालित्यपूर्ण,ढलावदार शारीरिक अभिनय है। इसकी उत्पत्ति का संबंध केरल के मंदिरों से है।

· **मोहिनीअट्टम का संगीत व वाद्य यंत्र -:**

मोहिनीअट्टम के मुख्य संगीत में विभिन्न प्रकार के लय शामिल है।

मोहिनीअट्टम में आमतौर पर इस्तेमाल होने वाले संगीत उपकरण में मृदंगम या मधालम (बैरल ड्रम), इदक्का (ऑवर गिलास ड्रम), बांसुरी, वीणा एवं किज्हितलम शामिल हैं। रागों को सोपाना शैली के अन्तर्गत धीमी गति से मधुर शैली में गाया जाता है।

· **मोहिनीअट्ट्म नृत्य की तालें -:**

मूलभूत इस नृत्य में ताल चार प्रकार के होते हैं -:

·तगानम

·जगानम

·धगानम

·सामीश्रम

ये नाम वैट्टारी नामक वर्गीकरण से उत्पन्न हुए हैं।

· **मोहिनीअट्ट्म नृत्य की वेशभूषा -:**

मोहिनीअट्ट्म में सहज लगने वाली साज सज्जा और सरल वेशभूषा धारण की जाती है। नृत्यांगना को केरल की सफ़ेद और सुनहरी किनारी वाली सुंदर कासावू साड़ी में सजाया जाता है।

· **मोहिनीअट्टम नृत्य में हस्त लक्षण दीपिका -:**

अन्य नृत्य रूपों के समान मोहिनीअट्ट्म में हस्त लक्षण दीपिका को अपनाया जाता है, जैसा कि मुद्रा की पाठ्य पुस्तक या हाथ के हाव भाव में दिया गया है। मोहिनीअट्ट्म के लिए मौखिक संगीत की शैली, जैसा कि आमतौर पर देखा गया है, शास्त्रीय कर्नाटक है। इसके गीत महाराजा स्वाति तिरुनल और इराइमान थम्पी द्वारा किए गए हैं जो मणिप्रवाल (संस्कृत और मलयालम का मिश्रण) में हैं। हाल ही में थोपी मडालम और वीना ने मोहिनीअट्ट्म में पृष्ठभूमि संगीत प्रदान किया। उनके स्थान पर हाल के वर्षों में मृदंग और वायलिन आ गया है।

· **मोहिनीअट्ट्म दर्शाता है भगवान के प्रति समर्पण -:**

मोहिनीअट्ट्म की विषय वस्तु प्रेम तथा भगवान के प्रति समर्पण है। विष्णु या कृष्ण इसमें अधिकांशत: नायक होते हैं। इसके दर्शक उनकी अदृश्य उपस्थिति को देख सकते हैं जब नायिका या महिला अपने सपनों और आकांक्षाओं का विवरण गोलाकार गतियों, कोमल पद तालों और गहरी अभिव्यक्ति के माध्यम से देती है। नृत्यांगना धीमी और मध्यम गति में अभिनय के लिए पर्याप्त स्थान बनाने में सक्षम होती है और भाव प्रकट कर पाती है। इस रूप में यह नृत्य भरतनाट्यम के समान लगता है। इसकी गतिविधियां ओडिसी के समान भव्य और इसके परिधान सादे तथा आकर्षक होते हैं। यह अनिवार्यत: एकल नृत्य है किन्तु वर्तमान समय में इसे समूहों में भी किया जाता है। मोहिनीअट्ट्म की परम्परा भरत नाट्यम के काफ़ी क़रीब चलती है। चोल केतु के साथ आरंभ करते हुए नृत्यांगना जाठीवरम, वरनम, पदम और तिलाना क्रम से करती है। वरनम में शुद्ध और अभिव्यक्ति वाला नृत्य किया जाता है, जबकि पदम में नृत्यांगना की अभिनय कला की प्रतिभा दिखाई देती है जबकि तिलाना में उसकी तकनीकी कलाकारी का प्रदर्शन होता है

▪भारतीय नृत्य :- गरबा

▪राज्य :- गुजरात

· परिचय :- हर साल देशभर में नवरात्र की धूम मचती है। नौ दिनों तक चलने वाले इस त्योहार में लोग मां दुर्गा की आराधना करते हैं और इस पर्व का उत्सव मनाते हैं।

पूरा देश नवरात्र के जश्न में डूबता है। नौ दिनों तक चलने वाले इस त्योहार में लोग मां दुर्गा के नौ रूपों की आराधना करते हैं। साथ ही शक्ति के इन स्वरूपों का उत्सव भी मनाते हैं। इस त्योहार से एक जुड़ी एक और चीज है, जो लोगों के मन को उत्साह और उमंग से भर देती है। दरअसल, नवरात्र का नाम सुनते ही सबसे पहले मन में गरबा और डांडिया का ख्याल आता है।

नवरात्र हो और गरबा का जिक्र न हो ऐसा तो हो ही नहीं सकता।

नवरात्र और गरबा-डांडिया का एक-दूसरे से गहरा रिश्ता है। हम में से कई लोगों को गरबा काफी पसंद है, लेकिन बेहद कम लोग ही इसके इतिहास के बारे में जानते हैं।

तो आइए जानते हैं क्या है गरबे का इतिहास और इसका महत्व?

· क्या है गरबा ?

गरबा एक प्रकार का लोकनृत्य है, जिसकी शुरुआत गुजरात से हुई थी। यह न सिर्फ एक धार्मिक, बल्कि सामाजिक कार्यक्रम भी है, जिसे मुख्य रूप से नवरात्र के त्योहार के मौके पर किया जाता है। इस नृत्य की शुरुआत गुजरात के गांवों से हुई थी, जिसे लोग गांव के केंद्र में सामुदायिक सभा स्थलों पर करते थे। गरबा नृत्य की खास बात यही है कि गरबा दुनिया का सबसे लंबा और सबसे बड़ा नृत्य उत्सव है।

· नवरात्र व गरबा का संबंध :-

नवरात्र हिंदू धर्म का प्रमुख त्योहार है,जो मुख्य रूप से मां दुर्गा को समर्पित है। देश के विभिन्न हिस्सों में इस त्योहार को कई तरीकों से मनाया जाता है। बात करें गुजरात की तो, नवरात्र को यहां श्रद्धा और पूजा के रूप में नौ रातों तक नृत्य के साथ मनाया जाता है।यहाँ महिलाएं और पुरुष शाम से शुरू होकर देर रात तक मां दुर्गा के इस पर्व का जश्न मनाते हुए आदिशक्ति के सम्मान में नृत्य करते हैं। गरबा गुजरात में नवरात्र के दौरान आकर्षण का केंद्र रहता है। हालांकि, यह लोकनृत्य सिर्फ नवरात्र में ही नहीं, बल्कि विभिन्न सामाजिक कार्यक्रमों जैसे शादियों और पार्टियों के दौरान भी किया जाता है।

· नारीत्व का जश्न मनाना है गरबा :-

आमतौर पर लोग इस नृत्य को खुशी और उत्सव से जोड़कर देखते हैं। हालांकि, इसका असल अर्थ कुछ और है। दरअसल, गरबा जिसे गरबो के नाम से भी जाना जाता है, प्रजनन क्षमता (Fertility) का जश्न मनाता है और नारीत्व (Womanhood) का सम्मान करता है। बात करें इसके नाम की, तो इस नृत्य का नाम "गरबा" संस्कृत शब्द गर्भ से लिया गया है।

· कैसे हुई गरबा की शुरुआत ?

गुजरात में इस नृत्य का अपना अलग महत्व भी है। दरअसल, यहां पर परंपरागत रूप से लड़की के पहले मासिक धर्म और बाद में, उसकी शादी के मौके पर इस नृत्य को किया जाता है। इसके अलावा नौ दिनों तक चलने वाले नवरात्र उत्सव के दौरान भी इसका आयोजन किया जाता है। इसके अलावा कुछ पुराणों में गरबा और इससे मिलते-जुलते नृत्यों का ज़िक्र मिलता है।

· गरबा की पौराणिक कथा :-

गरबा की उत्पत्ति से जुड़ी एक पौराणिक कहानी भी काफी मशहूर है। माना जाता है कि राक्षसों के राजा महिषासुर को ब्रह्म देव से वरदान मिला था कि कोई भी पुरुष उसे कभी नहीं मार सकेगा। यह वरदान मिलने के बाद से ही महिषासुर ने तीनों लोकों में तबाही मचा रखी थी। यहां तक कि देवता भी उसे हराने में असमर्थ थे। ऐसे में महिषासुर के आतंक से पीड़ित देवतागण मदद के लिए भगवान विष्णु के पास पहुंचे और इस विषय के समाधान पर चर्चा करने के बाद ब्रह्मा, विष्णु और महेश की शक्ति से मां दुर्गा का अवतरण हुआ।

अपनी उत्पत्ति के बाद 9 दिनों तक लगातार युद्ध करने के बाद देवी दुर्गा ने राक्षस राजा महिषासुर का वध कर उसके अत्याचारों को समाप्त किया, जिससे दुनिया की पूर्ण विनाश से रक्षा हुई। गरबा दुनिया में शांति लाने के लिए देवी की दृढ़ता और कड़ी मेहनत के लिए उन्हें धन्यवाद देने के लिए किया जाने वाला नृत्य है।

· गरबा करने का तरीका :-

अन्य नृत्य कलाओं से विपरीत गरबा को करने का अपना एक अलग तरीका है। इसे करने के लिए पुरुष और महिला प्रतिभागी एक गोलाकार आकृति बनाते हैं। यह वृत (Circle) जीवन चक्र को दर्शाते हैं, जो जन्म से लेकर पुनर्जन्म तक के हर चरण का प्रतिनिधित्व करते हैं। इन वृत के केंद्र में देवी दुर्गा की तस्वीर को सम्मान के रूप में रखा जाता है और इसके तस्वीर के सामने एक गहरा मिट्टी का दीपक होता है। यह नृत्य राक्षस राजा और देवी के बीच हुई लड़ाई के नाटकीयकरण को दर्शाता है। कभी-कभी लोग गरबा नृत्य प्रदर्शन को डांडिया रास के साथ जोड़कर करते हैं, जिसमें सजी हुई लाठियां (जिन्हें डांडिया भी कहते हैं) भी शामिल होती हैं। ये लाठियां उन तलवारों का प्रतीक होती हैं, जिनका इस्तेमाल देवी ने युद्ध के दौरान किया था।

· गरबा की पारंपरिक पोशाक :-

यह नृत्य आमतौर पर जोड़े में किया जाता है, जिसमें महिलाओं के साथ पुरुष हिस्सा लेते हैं। ऐसे में इस नृत्य को करने के लिए दोनों के लिए पारंपरिक पोशाक निर्धारित है। इस दौरान महिलाएं रंगीन और चमचमाती चनिया चोली के साथ कमरबंध या कपड़े के टुकड़े से बना पारंपरिक रंगीन और पैटर्न वाला कमरबंद पहनती हैं। इसे चुन्नी के ऊपर से पहना जाता है। इसके अलावा महिलाएं अपने इस लुक को पारंपरिक आभूषणों जैसे हार, अंगूठी, नथ, पायल आदि से पूरा करती हैं।

वहीं, पुरुष गरबा के लिए केविया और चूड़ीदार पहनते हैं। केविया लंबी बाजू वाला एक टॉप जैसा कपड़ा है, जिसमें सिला हुआ कोट और रंगीन वर्क होता है। चूड़ीदार तंग पतलून हैं जिन्हें पारंपरिक नृत्य करते समय अतिरिक्त आराम के लिए पैंट की तरह पहना जाता है।

· देशभर में मशहूर गरबा :-

बदलते समय के साथ गरबा नृत्य की लोकप्रियता भी काफी बढ़ चुकी है। गुजरात के अलावा अब इस नृत्य को देश के अन्य हिस्सों में काफी पसंद किया जाता है। भारत ही नहीं गरबा दुनिया भर के हिंदू समुदायों में लोकप्रियता हासिल करने की वजह से अब गुजरात से बाहर भी फैल चुका है। देश के अन्य हिस्सों खासकर दक्षिण-पूर्व में तमिलनाडु में और गुजरात के उत्तरपूर्वी पड़ोसी राजस्थान में भी गरबा के समान लोक नृत्य पाए जाते हैं।

·गरबा से जुड़ी मान्यताएं -: शाक्त-शैव समाज के गीत और वैष्णव अर्थात् राधा कृष्ण के वर्णनवाले गीत गरबा कहे जाते हैं।नवरात्रि के समय पूरे देश में गरबा नृत्य किया जाता है|गरबा सौभाग्य का प्रतीक माना जाता है और अश्विन मास की नवरात्रों को गरबा नृत्योत्सव के रूप में मनाया जाता है। नवरात्रों की पहली रात्रि को गरबा की स्थापना होती है। फिर उसमें चार ज्योतियाँ प्रज्वलित की जाती हैं। फिर उसके चारों ओर ताली बजाकर फेरे लगाते हैं।

आधुनिक गरबा -: आधुनिक गरबा/ डांडिया रास से प्रभावित एक नृत्य है जिसे परंपरागत पुरषों तथा महिलाओं द्वारा किया जाता है। इन दोनों नृत्यों के विलय से आज जो उच्च उर्जा नृत्य का गठन हुआ है, उसे हम आज देख रहे है। आम तौर पर पुरुष और महिलाये रंगीन वेश-भूषा पहने हुए गरबा और डांडिया का प्रदर्शन करते हैं।

▪लोकनृत्य :- नाटी

राज्य :- उत्तराखंड

परिचय: आधुनिकीकरण के बाद भी,उत्तराखंड अपनी समृद्ध संस्कृति और जड़ों के बारे में नहीं भूला है व इसने अपनी समृद्ध पारंपरिक संस्कृति को कायम रखा है। इस क्षेत्र के पहाड़ और घाटियाँ यहाँ के नृत्य रूपों में प्रतिबिंबित होते हैं। नाटी नृत्य इस राज्य का सबसे प्रसिद्ध लोक नृत्य है। यह संगीतकारों के साथ लोगों के एक समूह द्वारा प्रदर्शित किया जाता है। नाटी एक प्रसिद्ध लोक नृत्य है। यह नृत्य हिमाचल प्रदेश और उत्तराखंड के प्रांतीय संस्कृति से विशेष रूप से जुड़ा हुआ है। नाटी नृत्य ऐतिहासिक रूप से कुल्लू, शिमला, सिरमौर, चम्बा, किन्नौर, उत्तरकाशी, देहरादून (जौनसार-बावर) और टिहरी गढ़वाल जिलों में काफ़ी प्रचलित है। यह नृत्य यहाँ के स्थानीय संस्कृति को दर्शाता है। इसका प्रदर्शन मुख्य रूप से यहाँ के प्रमुख त्योहारों और उत्सवों के दौरान किया जाता है। इसकी शैली काफ़ी हद तक श्री कृष्ण और गोपियों के द्वारा किए जाने वाले रासलीला के समान है। आरम्भ में नाटी शब्द का प्रयोग भारतीय उपमहाद्वीप की पश्चिमी और मध्य पहाड़ियों में गाए जाने वाले पारंपरिक लोक गीतों के लिए किया जाता था पर धीरे-धीरे इन लोक गीतों के साथ-साथ लोक नृत्य भी जुड़ता चला गया। वर्तमान समय में मैदानी इलाकों में जातीय पहाड़ी लोगों के उच्च आप्रवासन के कारण यह नृत्य मैदानी इलाकों में भी लोकप्रिय बन गया है। परम्परागत रूप से ढोल-ढमाऊ नामक वाद्ययंत्र के ताल पर इस नृत्य को प्रस्तुत किया जाता है। इस पहाड़ी नृत्य को गिनीज़ वर्ल्ड रिकॉर्ड्स की पुस्तक में सबसे बड़े लोक नृत्य के रूप में सूचीबद्ध किया गया है।

यह नृत्य हिमाचल प्रदेश और उत्तराखंड के पारंपरिक क्षेत्र को सामने लाता है। यह नृत्य रास लीला को दर्शाता है और कृष्ण और गोपियों की कहानी बताता है। शादियों और अन्य खुशी के अवसरों पर भी नाटी की जाती है।

नृत्य का एक सार अनुक्रम होता है और यह मुख्य रूप से नए साल के उत्सव से जुड़ा होता है। नाटी नृत्य भारत के कई अन्य हिस्सों में भी किया जाता है।

· नाटी नृत्य का इतिहास क्या है ?

नाटी नृत्य उत्तराखण्ड व हिमाचल प्रदेश के कुल्लू जिले का एक स्थानीय लोक नृत्य है और इसमें रास लीला या हिंदू भगवान कृष्ण और गोपियों से संबंधित नृत्य और चंद्रावली के मनोरंजक नाटकों को दर्शाया गया है। नर्तक अपने हाथ जोड़ते हैं और संगीत और लय के अनुसार गति करते हैं। हालाँकि, इसकी तेरह शैलियाँ हैं।

· **नाटी नृत्य की वेशभूषा -:** नाटी नृत्य के दौरान नर्तक और नर्तकियों को समृद्ध और रंगीन वेशभूषा में सुंदर ढंग से तैयार किया जाता है जो प्रदर्शन की जीवंतता को और भी अधिक बढ़ा देता है।

नाटी नृत्य समूह में पुरुष और महिला दोनों सम्मिलित होते हैं, जिसका नेतृत्व प्रायः चँवर पकड़े हुए एक पुरुष करता है। नृत्य समूह की पोशाक गद्दी या हिमाचली खानाबदोशों को दर्शाती है। पुरुष ऊनी वस्त्र पहनते हैं जिसमें पीठ के निचले हिस्से पर लंबे कमरबंद बंधे होते हैं। वे एक प्रतीकात्मक हिमाचली टोपी भी पहनते हैं, जिसके सबसे ऊपरी हिस्से पर फूल लगाए जाते हैं। दूसरी ओर महिलाएँ नर के समान लंबे वस्त्र चूड़ीदार, चोला व गहने पहनती हैं और रंगीन स्कार्फ़ से अपना सिर ढकती हैं साथ ही।महिलाएं अपनी प्रस्तुति देते समय चंकी और टुंकी जैसे कई पारम्परिक भारी आभूषण पहनती हैं। उनके ग्लैमरस आउटफिट मंच को शानदार बनाते हैं और देखने वालों के लिए एक ट्रीट हैं। संगीतकारों को टूनिस कहा जाता है और प्रदर्शन के दौरान बाँसुरी, ढोल, नगाड़ा, नरसिंघा, करनाल, और सनई वाद्ययंत्र उपयोग किये जाते हैं। नाटी प्रदर्शन के अंत में नर्तकों द्वारा देवी और देवताओं को श्रद्धांजलि देने के रूप में एक यज्ञ किया जाता है।

· **नाटी का संगीत व प्रयुक्त उपकरण -:**

नाटी प्रदर्शन के दौरान गाने को बजाने के लिए नागर, शेनाई, करनाल, बांसुरी, नर्सिंग और ढोल मुख्य वाद्ययंत्र हैं। संगीतकारों को स्थानीय भाषा में ट्यूनिस कहा जाता है। नृत्य के दौरान गाए गए गीतों में कहानियां होती हैं। वे हमें पुराने लोककथाओं के बारे में बताते हैं। इन नृत्य रूपों और लोक गीतों का कारण है कि हिमाचल अपने इतिहास के बारे में इतनी खूबसूरत बातें नहीं भूल पाया है।

· **नाटी नृत्य का प्रदर्शन -:**

नाटी नृत्य में नर या मादा नर्तकियों पर कोई प्रतिबंध नहीं है, दोनो भाग ले सकते हैं। पुराने जमाने में महिलाएं और पुरुष अलग-अलग ग्रुप में परफॉर्म करते थे। नर्तकियों के समूह का नेतृत्व कुछ मुख्य पुरुष नर्तक करते हैं जो एक फ्लाई व्हिस्क लेकर चलते हैं। प्रारंभ में, सभी नर्तक हाथ पकड़कर एक घेरा बनाते हैं। इसे धीमा नृत्य माना जा सकता है लेकिन शैलियों के बीच में वे ताल के अनुसार नृत्य करते हैं। नाटी के अंत में, नर्तकियों द्वारा देवी-देवताओं को श्रद्धांजलि अर्पित करने के लिए एक यज्ञ किया जाता है।

· **नाटी नृत्य की विविधताएं :-**

नाटी स्थानीय और दुनिया भर में प्रसिद्ध है। कुछ दूरी के बाद इसे थोड़ा बदल दिया जाता है, यही कारण है कि नाटी नृत्य के एक से अधिक रूपांतर हैं। वह है-

·सिरमौरी नाटी (सिरमौर नाटी)

·किन्नौरी नाटी

·कुल्लुवी नाटी

·शिमला नटी

·लाहौली नाटी

नाटी नृत्य के कई रूप प्रचलित हैं, जैसे- महासुवी नाटी, जौनपुरी नाटी, सेराजी नाटी, करसोगी नाटी, चुहारी नाटी, बरदा नाटी, बंगाणी नाटी।

गढ़वाली में इसे कभी-कभी तांदी भी कहा जाता है, विशेषकर टिहरी गढ़वाल में , और जौनसार-बावर में बरदा नाटी कहा जाता है। किन्नौरी नाटी नृत्य स्वांग जैसा है और इसमें सुस्त अनुक्रम शामिल हैं। नाटी के नृत्यों में प्रमुख है 'लोसर शोन चुकसोम'। लोसाई, या नव वर्ष। इसमें फसल बोना और काटना जैसी गतिविधियाँ शामिल हैं।

·नाटी नृत्य के रिकॉर्ड्स -: नाटी नृत्य के नाम पर कई रिकॉर्ड्स भी शामिल हैं। जैसे जनवरी 2016 के दूसरे सप्ताह में नाटी नृत्य को दुनिया के सबसे बड़े लोक नृत्य के रूप में गिनीज़ वर्ल्ड रिकॉर्ड्स की पुस्तक में सूचीबद्ध किया गया है। इसके अतिरिक्त प्रतिभागियों की संख्या के मामले में भी नाटी को सबसे बड़े लोक नृत्य के रूप में जाना जाता है। 26 अक्टूबर 2015 को अंतर्राष्ट्रीय दशहरा उत्सव के दौरान लगभग 9892 महिलाओं ने इस लोक नृत्य में भाग लिया था, इस उत्सव के दौरान महिलाओं ने एक पारंपरिक रंगीन पोशाक कुल्लवी पहन रखी थी।

▪ **सांस्कृतिक त्योहार :- फुलाइच महोत्सव (फूलों का त्योहार)**

▪ **राज्य :- हिमाचल प्रदेश**

·**परिचय-:** हिमाचल प्रदेश के हर कोने में आपको बर्फ ही दिखाई देगी। ठंडे मौसम और बर्फीले पहाड़ों की खूबसूरती पूरे हिमाचल प्रदेश में फैली हुई है। भारत में पर्यटकों, बैकपैकर और रोमांचित ट्रिप के शौकीन लोगों के लिए हिमाचल प्रदेश सबसे बेहतर पर्यटन स्थल है।

ऊंचे पर्वतों की बर्फ से ढकी चोटियां, घाटियां, झरने और देवदार के घने जंगल इस जगह की प्राकृतिक सुंदरता में चार चांद लगा देते हैं।

·**हिमाचली संस्कृति :-** हिमाचल प्रदेश के लोग, उनकी अनूठी संस्कृति और उनके त्योहार इस जगह को और खास बना देते हैं। यहां पर उक्यान और किन्नौर का फूलों का फुलाइच मेला बहुत प्रसिद्ध है। सेब और अखरोट के बागानों के साथ किन्नौर कैलाश पर्वत बहुत ही खूबसूरत दिखाई देता है। किन्नौरी गांव में फुलाइच मेले का आयोजन किया जाता है।

·फुलाइच कब और कहाँ मनाया जाता है?

यह त्यौहार भाद्रपद (अगस्त और सितंबर) के हिंदू महीने के 16 वें दिन हिमाचल प्रदेश के कुछ गाँवो में मनाया जाता है।

यह मौसम पहाड़ियों के ऊपरी क्षेत्रों में जंगली फूलों (लदा) के खिलने का होता है। स्थानीय रूप सें, इसे ऊकायंद या उक्यान महोत्सव भी कहते हैं, उ का अर्थ फूल एंव क्यांद का अर्थ त्योहार अतः इसे फूलों का त्यौहार भी कहा जाता है।

(अगस्त और सितंबर) के दौरान हिमाचल का मौसम बेहद सुहावना होता है और थोड़ी-बहुत वर्षा भी होती है। हिमाचल की घाटियों पर खूबसूरत फूल सजे रहते हैं। ग्रामीणों का एक समूह पहाड़ के ऊपर चढ़ाई कर विशेष रूप से लाद्रा फूल लेकर आता है दूसरा समूह किसी और पहाड़ी पर जाकर ड्रम से संगीत बजाता है।

·फुलाइच कैसे मनाया जाता है?

यह त्यौहार दो दिन का होता है। जिसमें पहले दिन,गाँव वाले मिलकर पहाड़ी के पास जाते है। फिर 5 से 10 लोगों को पूजा करके फूल लाने के लिए पहाड़ी पर भेजा जाता है जो इनके रात को ही तोड़ कर लाना होता हैं।

दूसरे दिन,फुल तोड़कर लाये गए लोग उन फूलों को पूजा के लिए सबको बाँट देते है। ऐसा माना जाता है कि जो लोग पहली बार इस परंपरा में शामिल होते हैं उन्हें चक्कर आने जैसा महसूस होता है। लोगों के लौटने के बाद रात मौज-मस्ती में कटती है। फिर यह सब पूजा करके त्यौहार का आनंद लेते है।

·फुलाइच क्यों मनाया जाता है?

यह त्यौहार उन लोगों की याद में मनाया जाता है,जिनका निधन हो चुका हैं।

मृत परिजनों को फूलों का हार, चावल और वाइन अर्पित कर उन्हें सम्मान देकर याद किया जाता है।

·**फुलाइच के मुख्य आकर्षण :-** फुलाइच के दौरान आसपास के गांव के लोग और पर्यटक भी इसे देखने आते हैं। यहां पर रंग-बिरंगी स्टॉल लगती हैं। कई तरह के पारंपरिक उत्सव जैसे लोक नृत्य और लोक गीत आदि की प्रस्तुति दी जाती है। इसके अलावा कुछ धार्मिक प्रस्तुति, मनोरंजक कार्य और खेल आदि का आयोजन भी किया जाता है।

▪इण्डियन मार्शल आर्ट - गतका या गटका

▪राज्य - पंजाब

· **परिचय :-** जुर्म के खिलाफ सिक्खों की जो मार्शल आर्ट फौज गुरू गोबिंद सिंह जी ने तैयार की थी वह सिक्ख मार्शल आर्ट अब एक कला बन चुकी है जो है गतका यानी सिक्ख मार्शल आर्ट।

सिक्खों का यह पारंपरिक मार्शल आर्ट खेल जिसे कभी ब्रिटिश राज्य में बैन किया गया था,अब नेशनल गेम्स में शामिल हो गया है।

'गटका' साल 2023 के 37वें नेशनल गेम्स का हिस्सा बना जो इस साल गोवा में अक्टूबर में हुए।

· क्या है गतका ?

गतका सिक्खों की एक पारंपरिक युद्धक कला है। वर्तमान में भी सिक्खों के धार्मिक उत्सवों में इस कला का शस्त्र संचालन प्रदर्शन किया जाता है। पंजाब सरकार (भारत) ने इस भारतीय मार्शल आर्ट 'गतका' को खेल की मान्यता प्रदान कर दी है।

अंतर्राष्ट्रीय गतका फेडरेशन की स्थापना 1982 में हुई थी और 1987 में औपचारिक रूप से इसे स्थापित किया गया था, गतका अब एक खेल या तलवारबाजी प्रदर्शन कला के रूप में लोकप्रिय है और अक्सर सिक्ख त्योहारों के दौरान दिखाया जाता है।

· **गतका की उत्पत्ति :-** गटका या गतका का सिक्ख गुरुओं ने अविष्कार किया था।

कहते हैं कि सालों पहले फ़ारसी भाषा में गतका को 'खुटका' या 'खुतका' कहा जाता था और 16वीं शताब्दी के आस-पास इसे गतका कहा जाने लगा।

कुछ लोगों का यह भी कहना है की यह संस्कृत शब्द गदा से आया है।

वैसे गतका का शब्दिक अर्थ है लकड़ी की छड़ी या तलवार नुमा लकड़ी की छड़ी।

इसकी उत्पत्ति तो काफी पुरानी है पर इसकी शुरुआत या चलन 15वीं या 16वीं शताब्दी से माना जाता है।

कहा जाता है कि जब मुगलों का आतंक बहुत ज्यादा बढ़ गया था और सिक्खों के पांचवें गुरु श्री अर्जुन देव जी को मुगल शासक औरंगज़ेब के द्वारा शहीद कर दिया गया, इस घटना ने सिक्खों में रोष पैदा कर दिया ।

फिर हरगोविंद साहब जी सिक्खों के छठे गुरु हुए, इन्होंने 6 साल की उम्र में ही बाबा बुड्डाजी से शस्त्र विद्या सीखना शुरू कर दिया था।

बाबा बुड्डाजी गुरु नानक जी के शुरुआती शिष्यों में से एक थे।

गुरु हरगोविंद जी ने बाबा रणजीत अखाड़े के नाम से पहला गतका शुरू अखाड़ा किया जिसमें गतका, कुश्ती, शस्त्र विद्या, घुड़सवारी सहित कई चीज़ों की ट्रेनिंग दी जाने लगी और गतका सिखाने वाले सिपाहियों को अकाल सेना में निहंग कहा जाने लगा।

निहंग अर्थात नी - अंग, जिसका अपना कोई अंग नहीं है, जो भी है वह गुरुओं का है।

जो अपना पूरा जीवन समाज के कल्याण में लगा देता है, जो किसी से नहीं डरता, मौत से भी नहीं वह है निहंग।

गतका का उद्देश्य किसी को नुकसान पहुंचाना, किसी पर हावी होना या किसी पर कब्ज़ा करना क्नहीं है, इसका उद्देश्य है न्याय करना।

19वीं शताब्दी के बीच में अंग्रेजों ने बंदूकों के जोर पर महाराजा रणजीत सिंह की गतका सेना को हरा दिया और गतका के अभ्यास को निषेध कर दिया।

कुछ समय तक सिक्ख छुपकर गतका का अभ्यास करते रहे और फिर गतका पर से रोक हटाने के लिए उन्होंने जुलूस निकाले व प्रदर्शन किया।

अंत में अँग्रेजों को गतका पर से रोक हटानी पड़ी।

· **गतका का इतिहास :-** गतका शब्द के जन्मदाता सिक्खों के छठे गुरु श्री हर गोविंद साहिब जी को ही माना जाता है, जिन्होंने सिक्खों को युद्ध कलाएं सिखाने और सैन्य परीक्षण के लिये प्रेरित किया।

तभी से गतका सिक्ख योद्धाओं की पारंपरिक जंग की शैली के रूप में विकसित हुआ, जिस कारण गुरु हर गोविंद जी को मीरी पीरी के बादशाह कहा जाता है।

आगे बढ़ते हुए सन 1675 - 1707 के दौरान जब कुछ सियासत के स्वार्थी बादशाहों का गरीब जनता पर जुल्म चरम पर था, तब उनसे मुकाबला करने के लिए सिक्खों के दसवें गुरु श्री गोविंद सिंह ने सिक्ख फौज को तैयार कर गतका कला को अनिवार्य कर अपने अनुयाइयों को योद्धा बनाया और आह्वान किया "सवा लाख से एक लड़ाऊं, चिड़ियन ते मैं बाज तुड़ाऊं, तबै गोबिंद सिंह नाम कहाऊं" और कहा कि तलवार जुल्म के खिलाफ और दीन दुखी की रक्षा के लिए ही उठानी है।

आज गतका कला परंपरा एक साहसिक खेल के रूप में उभर रही है। सिक्खों के विभिन्न धार्मिक एवं सांस्कृतिक उत्सवों पर गतका कला का शस्त्र संचालन व प्रदर्शन किया जाता है।

· कैसे करतब किये जाते हैं गतका में?

गतका का संबंध पंजाब से है और यह निहंग सिक्ख योद्धाओं की पारंपरिक लड़ाई शैली है। वे इसका उपयोग आत्म-रक्षा के साथ-साथ खेल के रूप में भी करते हैं।

इसे पारंपरिक कपड़ों में तलवार और ढाल व भाले के सहारे खेला जाता है और त्योहारों के मौकों पर इससे जुड़े करतब भी दिखाए जाते हैं।

एक खिलाड़ी के मुंह को कपड़े से बांध दिया जाता है, जिसके भीतर नुकीले कांच होते हैं और उसके बाद उस पर लोहे की रॉड से मारा जाता है और वजनी बर्फ की सिल्ली रखी जाती है और उसके सिर के नीचे नुकीली कीलों वाला तख्त होता है।

इतना खतरनाक स्टंट करने के बाद भी खिलाड़ी उठ खड़ा होकर "वाहेगुरु जी दा खालसा, वाहेगुरु जी दी फतेह" बोलता है, तो साहस देख पूरा मंच तालियों की गड़गड़ाहट से गूंज पड़ता है।

· केवल भारतीय ही नहीं विदेशी मंच पर भी दिख चुका है गतका का हुनर :- यूनाइटेड सिक्ख फेडरेशन के अध्यक्ष अमरजीत सिंह ने बताया कि गतका एक पारंपरिक सिक्ख मार्शल आर्ट फॉर्म है, जो ऐतिहासिक रूप से सिख गुरुओं के साथ जुड़ा हुआ है और आज भी जनता के बीच लोकप्रिय है।

यह एक साहसिक खेल के रूप में जाना जाता है। भारत के बीर खालसा ग्रुप ने अंतराष्ट्रीय स्तर पर 40 देशों में इसका प्रदर्शन किया है।

कलर्स टीवी के शो हुनरबाज से लेकर 2019 में प्रसारित हुए विदेशी टी०वी० चैनल पर "अमेरिकाज़ गॉट टैलेंट" में अपने स्टंट का बेहतरीन प्रदर्शन कर "बीर खालसा ग्रुप" ने लोगों को चौंका दिया ।

लोग चौकेंगे क्यों नहीं जब आंख बंद करके खतरनाक स्टंट मंच पर होंगे। गतका की इस टीम में 5 वर्ष से लेकर 50 वर्ष तक के खिलाड़ी साहस का परिचय देते हैं।

· वर्तमान मार्शल आर्ट व खेलों के बीच गतका का स्थान :-

कुछ दशकों के दौरान गतका मार्शल आर्ट लुप्त होती जा रही है, लेकिन खेलो इंडिया यूथ गेम्स- 2021 की मदद से इसे एक बार फिर राष्ट्रीय पहचान मिली।

यह कला आत्मरक्षा एवं युद्ध कला के साथ-साथ पारम्परिक लोक नृत्य के रूप में जानी जाती है साथ ही इसका सांस्कृतिक महत्व भी है और बताया जाता है कि इसकी शुरुआत 1891 में हुई थी।

गतका अब खेल का भी रूप ले चुका है।

सन् 1982 में इंटरनेशनल गतका फेडरेशन की स्थापना हुई जिससे 32 गतका फेडरेशन भी जुड़ी हुई हैं।

भारत में 2001 में नेशनल गतका फेडरेशन ऑफ इंडिया की स्थापना हुई।

गतका फेडरेशन, एशियन गतका फेडरेशन और इंटरनेशनल सिक्ख मार्शल आर्ट्स काउंसिल से संबंद्ध है।

गतका को भारतीय खेल प्राधिकरण व एस० जी० एफ० आई० और खेलो इंडिया में भी शामिल किया जा चुका है।

भारत सरकार ने गतका को स्वदेशी खेलों में भी शामिल किया है।

▪लोक नृत्य :- कच्छी घोड़ी

▪राज्य :- राजस्थान

·**परिचय :-** राजस्थान का ऐसा लोक नृत्य जिसकी धुन पर भारत जोड़ो यात्रा में आए लोग भी झूम उठे। साथ ही देसी वाद्य यंत्रों की धुनों पर खुद यूडीएच मिनिस्टर शांति धारीवाल भी अपने आप को नाचने से रोक नहीं पाए, वह लोक नृत्य है, कच्छी घोड़ी। इस लोक नृत्य को अंता के कलाकारों ने संजोकर रखा हुआ है। साथ ही राजस्थान का नाम पूरे देश में गौरवान्वित किए हुए है।

· कच्छी घोड़ी नृत्य :- कच्छी घोड़ी नृत्य , जिसे कच्छी घोड़ी और कच्छी गोरी भी कहा जाता है, एक भारतीय लोक नृत्य है जिसकी उत्पत्ति राजस्थान के शेखावाटी क्षेत्र में हुई थी। इसे पूरे देश में अपनाया गया। इसमें नर्तक नवीन घोड़े की पोशाक पहनते हैं, और नकली लड़ाई में भाग लेते हैं, जबकि एक गायक स्थानीय डाकुओं के बारे में लोक कथाएँ सुनाता है। यह आम तौर पर शादी समारोहों के दौरान दूल्हे की पार्टी के स्वागत और मनोरंजन के लिए और अन्य सामाजिक सेटिंग्स के दौरान किया जाता है। नृत्य प्रस्तुत करना भी कुछ व्यक्तियों के लिए एक पेशा है।

· कच्छी घोड़ी नृत्य की उत्पत्ति :- इस नृत्य की उत्पति राजस्थान के शाही दरबारों में हुई है। यह नृत्य राजस्थान का पारंपरिक लोक नृत्य है। यह नृत्य उन राजमार्ग लुटेरों की कहानी से संबंधित है जो शेखावाटी क्षेत्र में 17 वीं सदी में रहते थे व गरीबों को देने के लिए अमीरों का धन लूटते थे। ऐसा कहा जाता है कि मुगलों और मराठों के शासन के समय में इस नृत्य के बारे में एक दिलचस्प कहानी है। मुगल एक बार घोड़ों पर सवार होकर आए थे ,और मराठों के गांवों में से एक गांव में रुके। वे जब सोने के लिए चले गये , तब मराठे आये और उनके घोड़ों को चुरा लिया। बाद में पठानों ने युद्ध के माध्यम से इन घोड़ों को वापस पाया। यह युद्ध, घोड़ा युद्ध के रूप में जाना जाता है। राजस्थान में कला प्रदर्शन ज्यादातर राजस्थान के जनजातियों और जातियों के लिए सामाजिक ऐतिहासिक परिदृश्य को प्रतिबिंबित करता है। घोड़े हमेशा राजस्थान में युद्ध और परिवहन का एक बहुत ही महत्वपूर्ण हिस्सा रहे हैं।

·कच्छी घोड़ी नृत्य का क्षेत्र :- यह नृत्य राजस्थान का पारंपरिक लोक नृत्य है व राजस्थान के समारोहों, कला, संस्कृति और जीवन के साथ जुड़ा हुआ है। इस नृत्य का प्रदर्शन मुख्यतः शेखावाटी (राजस्थान) क्षेत्र में ही नहीं होता है बल्कि पूरे भारतवर्ष में पाया जाता है।

·कच्छी घोड़ी नर्तक की पोशाक :-

नर्तक शरीर के ऊपरी हिस्से पर पारंपरिक वेशभूषा लाल पगड़ी, धोती और कुर्ता पहनता है व शरीर के निचले हिस्से पर कागज की लुगदी और टोकरी से तैयार एक नकली घोड़ा पहनता है। नर्तक पैरों में घुँघरू पहनता है। पुरुष बेहतर चमकते दर्पणों से सुसज्जित फैंसी ड्रेस पहनते है ,और नकली घोड़ों पर सवारी करते हैं।

· कच्छी घोड़ी नृत्य के मुख्य वाद्ययंत्र :-

मुख्य :- बाँकियो

ढोल

बांसुरी

घुंघरू

अलगोजा

झाँझ

· कच्छी घोड़ी नृत्य का तरीका :-

कच्छी घोड़ी नृत्य नकली घोड़ो पर किया जाता है। नर्तक अपने हाथों में तलवार लेकर ,नकली घोड़ों पर सवारी करतें हैं।

ये नर्तक तलवारों कों ढोल व बांसुरी की लय पर संचालन करतें हैं।

प्रायः नकली घोड़े पर नकली घुड़दौड़ दौड़ता है व भंवारिया नाम के डकैत के बारे में गानें गाता है व अपनी तलवार का प्रदर्शन ढोल व बांसुरी की धुन पर करता है।

इस नृत्य में एक तरफ चार नर्तक खड़े होते है और चार दूसरी तरफ। ये जब आगे व पीछे नकली घोड़ों पर दौड़तें हैं तो ऐसे लगते है मानों फूल खुल व बंद हो रहे हों।

▪लोकनृत्य -:कालबेलिया

▪राज्य -: राजस्थान

·परिचय :- राजस्थान का गौरवमयी इतिहास है। सदियों पुरानी परंपराएं आज भी यहां अपने मूल रूप में हैं। अपनी आन बान और शान के लिए पहचाने जाने वाले इस प्रदेश की नृत्य परंपराएं भी पूरी दुनियां में लोकप्रिय हैं। यहां के सबसे लोकप्रिय 'कालबेलिया नृत्य' को संयुक्त राष्ट्र की इकाई 'युनेस्को' ने वर्ष 2010 से मानवता की सांस्कृतिक विरासत की प्रतिनिधि सूची में शामिल कर रखा है आज हम आपको बता रहे हैं जयपुर के कालबेलिया नृत्य के बारे में.....

·कालबेलिया जनजाति:-

कालबेलिया जनजाति के लोग कभी पेशेवर रूप से सर्प को पकड़ने (Professional Snake Handlers) का कार्य करते थे, आज वे संगीत और नृत्य में अपने पूर्व व्यवसाय को बनाए हुए हैं जो नए व रचनात्मक तरीकों के माध्यम से सामने आ रहा है।

वे खानाबदोश जीवन व्यतीत करते हैं और अनुसूचित जनजातियों (Scheduled Tribes) में शामिल हैं।

कालबेलिया की सबसे अधिक आबादी पाली ज़िले में पाई जाती है, उसके बाद अजमेर, चित्तौड़गढ़ और उदयपुर ज़िले (राजस्थान) में हैं।

· कालबेलिया नृत्य :- कालबेलिया राजस्थान की एक प्रसिद्ध नृत्य शैली है। वैसे कालबेलिया यहां की सपेरा जाति को कहा जाता है। इसलिए इसे इसी जाति का नृत्य कहा जाता है। महिलाओं द्वारा किए जाने वाले इस नृत्य की धूम अब पांच सितारा होटलों में भी सुनाई देने लगी है। गजब की फुर्ती से किया जाने वाला यह नृत्य दर्शकों को सम्मोहित कर लेता है।

· कालबेलिया नृत्य की उत्पत्ति :-

कालबेलिया नृत्य एक पारंपरिक भारतीय नृत्य शैली है जिसकी उत्पत्ति राजस्थान राज्य में हुई थी। यह एक जीवंत, ऊर्जावान नृत्य है जो राजस्थान में सपेरों की खानाबदोश जनजाति कालबेलिया के सदस्यों द्वारा किया जाता है।

· कालबेलिया नृत्य के वाद्य-यंत्र और पोशाक :-

राजस्थान में सपेरा जाति का यह नृत्य अपनी पोशाक और नृत्य के अनूठे तरीके के कारण भी जाना जाता है।

कालबेलिया नृत्य के दौरान एक विशेष प्रकार की पोशाक पहनी जाती है। कांच के टुकड़ों व जरी-गोटे से तैयार काले रंग की कुर्ती, लहंगा व चुनरी। घेरदार काले घाघरे में (काली स्कर्ट) में महिलाएंँ गोल गोल घूमते हुए सर्प की नकल करते हुए नृत्य करती हैं, जबकि पुरुष उनके साथ 'खंजारी' (khanjari) और 'पुंगी' (Poongi) वाद्य यंत्र बजाते हैं, जो पारंपरिक रूप से सांँपों को पकड़ने हेतु बजाया जाता है।

नर्तक शरीर पर पारंपरिक टैटू निर्मित करवाते हैं तथा आभूषण, छोटे दर्पण और चांदी के धागे से निर्मित कढ़ाई वाले वस्त्र पहनते हैं।

·कालबेलिया संगीत/गीत :-

कालबेलिया गीतों में कथाओं एवं कहानियों के माध्यम से पौराणिक ज्ञान का प्रसार किया जाता है।

इन गीतों में कालबेलिया के काव्य कौशल का प्रदर्शन होता है जिसका प्रयोग नृत्य प्रदर्शन हेतु गीतों को सहज रूप से लिखने और गीतों को बेहतर बनाने हेतु किया जाता है।

पीढ़ी-दर-पीढ़ी प्रेषित गीत और नृत्य एक मौखिक परंपरा का हिस्सा हैं, जिसके लिये कोई पाठ या प्रशिक्षण नियमावली मौजूद नहीं है।

·कालबेलिया नृत्य की मुद्राएँ :-

नृत्य के दौरान पुरुष बीन व ताल अन्य संगीत के यंत्र बजाते हैं। कालबेलिया नृत्य के दौरान स्त्रियों द्वारा सांप की तरह बल खाते हुए नृत्य की प्रस्तुति की जाती है। इस नृत्य के दौरान नृत्यांगनाओं द्वारा आंखों की पलक से अंगूठी उठाने, मुंह से पैसे उठाना, उल्टी चकरी खाना आदि कलाबाजियां दिखाई जाती है।

·पूरे विश्व में हैं कालबेलिया नृत्य के प्रशंसक:-

नृत्यांगनाओं में गजब का लोच और गति दर्शकों को मोहित कर लेती है। नृत्य के दौरान पहनी जाने वाले काले घाघरा चुनरी और चोली में बहुत सी चोटियां गुंथी होती हैं जो नृत्यांगना की गति के साथ बहुत मोहक लगती हैं। तीव्र गति पर घूमती नृत्यांगना जब विभिन्न भंगिमाएं करती हैं तो दर्शक वाह कह उठते हैं। कालबेलिया की प्रसिद्ध नृत्यांगना गुलाबो कई देशों में इस नृत्य का प्रदर्शन कर चुकी हैं। नृत्य के दौरान बीन और ढफ बजाई जाती है। लोक कलाकार सुरीली आवाज में गायन भी करते हैं।

· सांस्कृतिक विरासत की सूची में दर्ज है कालबेलिया नृत्य :-

केन्या की राजधानी नैरोबी में नवंबर, 2010 में हुई समिति की बैठक में यूनेस्को ने कालबेलिया नृत्य को अमूर्त सांस्कृतिक विरासत की प्रतिनिधि सूची में भी शामिल किया है।

कालबेलिया नृत्य कालबेलिया समुदाय के पारंपरिक जीवनशैली की एक अभिव्यक्ति है।

इसे वर्ष 2010 में संयुक्त राष्ट्र शैक्षिक, वैज्ञानिक और सांस्कृतिक संगठनों (UNESCO) की अमूर्त सांस्कृतिक विरासत (ICH) की सूची में शामिल किया गया था।

UNESCO की प्रतिष्ठित सूची उन अमूर्त विरासतों से मिलकर बनी है जो सांस्कृतिक विरासत की विविधता को प्रदर्शित करने और इसके महत्त्व के बारे में जागरूकता बढ़ाने में मदद करते हैं।

यह सूची 2008 में अमूर्त सांस्कृतिक विरासत की सुरक्षा पर कन्वेंशन के समय स्थापित की गई थी।

इस नृत्य रूप में घूमना और रमणीय संचरण शामिल है जो इस नृत्य को देखने लायक बनाता है।

कालबेलिया से जुड़े मूवमेंट भी इसे भारत में लोक नृत्य के सबसे भावमय रूपों में से एक बनाते हैं।

यह प्रायः किसी भी खुशी के उत्सव पर किया जाता है

गजानन जगन्नाथ माने (एक सामाजिक कार्यकर्ता एवं पदमश्री विजेता)

·**जन्म तिथि-:** 14 मई 1949

·**जन्म स्थान -:** डोंबिवलीकर, महाराष्ट्र

·**नाम :-** गजानन जगन्नाथ माने

·**उपनाम=** डोंबिवलीकर काका

·**पेशा :-** सामाजिक कार्यकर्ता

(दलित समुदाय, विशेषकर कुष्ठ रोगियों और उनके परिवारों की सेवा)

·**उपलब्धि=** पद्म श्री पुरस्कार

·परिचय :- बार कुष्ठ रोगियों को बीमारी के साथ-साथ समाज से भी लड़ना पड़ता है और ऐसे में सही इलाज के साथ-साथ उन्हें जरूरत होती है बहुत सारे प्रोत्साहन की और समर्थन की।

इस पूर्व सैनिक ने कुष्ठ रोगियों के पुनरुत्थान और उनके जीवन को बेहतर बनाने में अपना पूरा जीवन समर्पित कर दिया ।

जी हाँ, जब ऐसे सामाजिक कार्यकर्ता एक संकल्प के साथ अपनी सामाजिक जिम्मेदारी निभाते हैं तो पंक्ति में खड़े आखिरी व्यक्ति को भी मिलता है सम्मान से जीने का अवसर ।

गजानन जगन्नाथ माने, एक पूर्व सैनिक जिन्होनें देश की सरहदों की रक्षा करने के बाद सेवनिवृत्ति पर जीवन की दूसरी पारी को दिया एक नया मकसद, जनसेवा, लोगों के आंसू पोछना, सभी की मदद करना ।

जिसमें शामिल है समाज के उन लोगों का कल्याण जिनसे सब दूर भागते हैं ।

कुष्ठ रोगियों को समाज में स्वीकार्यता एवं सम्मान दिलाना जिन्होंने अपने जीवन का लक्ष्य बना लिया ।

1990 से कुष्ठ रोगियों के जीवन को बेहतर बनाने में जुटे हैं गजानंद माने।

·**शुरूआती जीवन:-**

14 मई 1949 को महाराष्ट्र में जन्मे श्री माने ने अपनी बुनियादी शिक्षा पूरी की और बॉयलर योग्यता परीक्षा पूरी की जिससे उन्हें पेशेवर रूप से मदद मिली।

भारतीय नौसेना में सेवा :-

भारत-चीन युद्ध और उसमें दिए गए सैनिकों के बलिदान से प्रेरित होकर माने 16 साल की उम्र में भारतीय नौसेना में शामिल हो गए।

नौसेना के अनुभवी गजानन जगन्नाथ माने ने भी 1971 के भारत-पाक युद्ध में भाग लिया था और युद्ध में उनकी भागीदारी के लिए उन्हें संग्राम पदक से सम्मानित किया गया था। यह वह युद्ध था जहां भारत ने बांग्लादेश को पाकिस्तान से आजादी दिलाने में मदद की और बांग्लादेश को एक स्वतंत्र देश बनने में मदद की।

·कुष्ठ रोगियों की सेवा:-

गजानन जगन्नाथ माने ने 1991 में कुष्ठ पुनर्वास के लिए अपना काम शुरू किया था। नौसेना के दिग्गज ने इस बीमारी से सफलतापूर्वक लड़ाई लड़ी है और 500 से अधिक रोगियों को ठीक किया है।

·नौसेना के अनुभवी गजानन जगन्नाथ माने की कुष्ठ रोग से लड़ाई के बारे में:-

नौसेना के अनुभवी गजानन जगन्नाथ माने ने वर्ष 1991 में कुष्ठ पुनर्वास की दिशा में अपना काम शुरू किया और आज तक, मुंबई के कल्याण में कुष्ठ सेवा संस्थान, हनुमान नगर (जिसे पहले हनुमान नगर कुष्ठरुग्नवसाहत के नाम से जाना जाता था) में इस नेक काम को जारी रखा है। इस कॉलोनी की आबादी 800 से अधिक निवासियों की है। नौसेना के अनुभवी ने क्षेत्र में कुष्ठ रोग के प्रसार का सफलतापूर्वक मुकाबला किया है और कल्याण-डोंबिवली नगर निगम और महाराष्ट्र सरकार के सार्वजनिक स्वास्थ्य विभाग (एडीएचएस) से संबद्ध एक इन-हाउस डिस्पेंसरी चलाकर 500 से अधिक रोगियों को पूरी तरह से ठीक किया है।

गजानन जगन्नाथ माने ने कॉलोनी के भीतर पुनर्वास योजना के हिस्से के रूप में कई कार्यक्रम लागू किए हैं, जिससे मरीजों और निवासियों को अब आजीविका कमाने में मदद मिलती है अन्यथा उनके लिए मुख्यधारा का रोजगार प्राप्त करना मुश्किल होता। कॉलोनी में शुरू की गई कुछ उल्लेखनीय परियोजनाओं में मोमबत्ती बनाना, चाक की छड़ें बनाना, डेयरी फार्म चलाना आदि शामिल हैं। यह सुनिश्चित करने के लिए कि आने वाली पीढ़ियाँ आत्मनिर्भर हों और उन्हें मुख्यधारा का माहौल मिल सके, कॉलोनी के बच्चों के लिए स्नातक तक की शिक्षा कुष्ठ सेवा संस्थान द्वारा सुनिश्चित की जाती है।

इसे राधा कृष्ण मंदिर में एकत्रित योगदान की सहायता से पूरा किया जा रहा है, जिसे सन् 2000 में कॉलोनी के मैदान में बनाया गया था। कल्याण-डोंबिवली नगर निगम और निजी क्षेत्र इस संस्थान में रोगियों के लिए मासिक वित्तीय सहायता प्रदान करते हैं। जो महिलाएं दर्जी के रूप में काम करना चाहती हैं उन्हें प्रशिक्षण दिया जाता है और उन्हें सिलाई के उपकरण उपलब्ध कराए जाते हैं।

कॉलोनी बीमारी के प्रसार को पूरी तरह से नियंत्रित करने में सफल रही है। पुनर्वास केंद्र को 2011 में डेयरी फार्म पहल के लिए जापान में सासाकावा लेप्रोसी फाउंडेशन से शीर्ष सम्मान मिला। मरीजों और उनके बच्चों को कल्याण-डोंबिवली नगर निगम और निजी क्षेत्र में काम प्रदान करने के अलावा, कॉलोनी अपने निवासियों को सिखाती है कि कैसे स्वतंत्र रहें।

·**उपलब्धियाँ :-** भारतीय नौसेना के अनुभवी गजानन जगन्नाथ माने, जो दलित समुदाय, विशेषकर कुष्ठ रोगियों और उनके परिवारों को अपनी सेवा प्रदान कर रहे हैं, को 23 अप्रैल 2023 को समाज के प्रति उनके कार्यों हेतु पद्म श्री पुरस्कार से सम्मानित किया गया है।

- **भारतीय मार्शल आर्ट :-** मर्दानी खेल(मराठा युद्ध कला)
- **राज्य :-** महाराष्ट्र

· **परिचय :-** मार्शल आर्ट्स, युद्ध प्रथाओं की संहिताबद्ध प्रणालियाँ और परंपराएँ हैं, जिनका अभ्यास कई कारणों से किया जाता है - आत्मरक्षा, प्रतिस्पर्धा, शारीरिक स्वास्थ्य और फिटनेस, मनोरंजन, साथ ही मानसिक, शारीरिक और आध्यात्मिक विकास।

भारत में विविध मार्शल आर्ट्स की एक प्राचीन परंपरा है। भारत के लगभग हर हिस्से में लोकप्रिय मार्शल आर्ट का कोई न कोई रूप विकसित हुआ है।

'मार्शल आर्ट्स', जैसा कि नाम से पता चलता है, लोकप्रिय कला रूप हैं जो लड़ाई के विभिन्न प्रकारों और आयामों में प्रशिक्षण देते हैं - भाले या तलवार से लड़ना, शारीरिक युद्ध, घुड़सवार सेना के हमले का विरोध करना, एकल युद्ध या कई के साथ युद्ध करना, आदि।

· **मर्दानी खेल (मराठा युद्ध कला) -:**

मर्दानी खेल : "मर्दाना खेल"

मर्दानी खेल मराठाओं द्वारा बनाई गई मार्शल आर्ट की एक सशस्त्र पद्धति है। महाराष्ट्र की यह पारंपरिक मार्शल आर्ट कोल्हापुर में प्रचलित है।

इसका इतिहास मराठा योद्धाओं से जुड़ा है, इसमें तलवार, लाठी और अन्य हथियार चलाने के 14 तरीके शामिल हैं। सभी अच्छी मार्शल आर्ट्स की तरह, यह आपको आक्रमण मोड में मानव शरीर रचना की कमजोरियाँ भी सिखाती है। मर्दानी खेल भारत के महाराष्ट्र प्रान्त का परम्परागत मार्शल आर्ट है। यह मराठों द्वारा सृजित एक शास्त्रों वाली युद्ध कला है। इस परम्परागत कला का अभ्यास मुख्यतः कोल्हापुर में किया जाता है।

यह युद्ध कला महाराष्ट्र के पहाड़ी क्षेत्र के अनुकूल है जहाँ यह उत्पन्न हुयी थी। इसमें तेज़ गतियाँ शामिल होती है। यह कला शस्त्रों विशेषकर तलवारों पर केन्द्रित है। इसमें लाठी-काठी, तलवार ढाल, दांडपट्टा आदि हथियारों का अभ्यास शामिल है। दोहरी पट्टा, तलवार, दांडपट्टा का प्रयोग प्रमुख है। अन्य हथियारों में बाघनख, बिछवा आदि शामिल है। इसका अभ्यास करने वाले परम्परागत सफेद-भगवा वेशभूषा पहनते हैं।

· **मर्दानी खेल का इतिहास :-**

मर्दानी खेल का विकास 15-16वीं शताब्दी में मराठा काल (लगभग 1850 से 1857 तक) में हुआ। महान मराठा राजा छत्रपति शिवाजी ने मुगलों की विशाल सेना का मुकाबला करने के लिये छापामार (गुरिल्ला युद्ध) पद्धति शुरू की। इसी काल में पश्चिम भारत के पहाड़ी जंगलों में छापामार पद्धति से युद्ध के लिये इस कला का विकास हुआ। शिवाजी स्वयं शस्त्र युद्ध में निपुण थे जिनमें तलवार, बाघनख, बिछवा आदि शामिल थे। उनका पसन्दीदा हथियार भवानी नामक 4 फुट की तलवार थी जिसके हत्थे पर नुकीला सिरा था। किंवदंती के अनुसार यह तलवार उन्हें उनकी कुलदेवी तुलजा भवानी ने स्वयं प्रदान की थी।

मराठा 17वीं शताब्दी में शिवाजी राव भोसले, उनके भाई इकोजी तथा पुत्र शम्भाजी के नेतृत्व में प्रमुख ताकत बनकर उभरे महाराष्ट्र के पहाड़ी भूगोल के चलते वे छापामार युद्ध में निपुण हो गये। मुगल शासकों द्वारा सेना के शाही सेनापति के रूप में वे 1720 से 1740 के बीच राज्यसत्ता के रक्षक बने रहे। 1751 तक पश्चिमी डेक्कन उनके कब्जे में आ गया तथा वे भारत में एक प्रमुख शक्ति बन गये। यह मर्दानी खेल युद्ध कला का स्वर्ण काल था। वर्तमान में इसका अभ्यास मुख्यतः कोल्हापुर में ही सीमित है। इसमें पूरी तरह निपुण कुछ ही लोग रह गये हैं।

· मर्दानी खेल में प्रयुक्त लाठी-काठी:-

इसमें लगभग छह फुट की लाठी का प्रयोग होता है। अधिकतर लाठी को बीच से पकड़कर घुमाने वाली शैली प्रयोग होती है। बीच से पकड़कर घुमाने वाली शैली में लाठी वाले दक्षिण भारतीय मार्शल आर्ट सिलम्बन की छाप दिखायी जाती है। प्रदर्शन के निमित्त आजकल एल्युमिनियम के पाइप का प्रयोग होता है।

· **वर्तमान समय में आत्मरक्षा का माध्यम :-**

कोल्हापुर नागरिक निकाय ने लड़कियों और महिलाओं को आत्मरक्षा के लिए इस कला में प्रशिक्षित करने के लिए एक कार्यक्रम शुरू किया है ।

▪कामे गौड़ा (पॉन्ड मैन)
·**जन्म =** 1904 ई०
·**जन्म स्थान** - मांड्या ,असनाडोड्डी (कर्नाटक)
·**उपनाम=** आधुनिक भागीरथ

· **परिचय :-** कहते हैं कि इंसान के द्वारा किये गये काम ही उनका नाम बनाते हैं, ये बात सच कर दिखायी है कर्नाटक के कामे गौड़ा जी ने।
यू तो इनका नाम सुनने में साधारण लगता है परन्तु इनके द्वारा किये गये कार्य बिल्कुल भी साधारण नहीं हैं।
82 वर्ष के चरवाहा कामे गौड़ा भले ही अशिक्षित थे परन्तु वह ऐसे कार्य करने की क्षमता रखते थे जिनके बारे में कई शिक्षित पर्यावरणवादी केवल सोच ही सकते हैं।
इन्होनें पिछले चालीस सालों में अकेले अपने दम पर अपने गांव में पंद्रह से भी ज्यादा तालाब बना डाले और ये तालाब आज हर तरह के जीव जंतुओं की प्यास बुझाते हैं ।

·तो, कामे गौड़ा कौन थे?
वह कर्नाटक के एक छोटे से गाँव में चरवाहा था।
हालाँकि, भेड़ों के झुंड के प्रति उनका प्यार उन्हें प्रकृति के करीब लेकर आया।
वह कभी स्कूल नहीं गए इसलिए उन्होंने स्कूल में कुछ भी नहीं सीखा फिर भी उन्होंने जानवरों और पक्षियों की कठिनाइयों को दूर करने के लिए झीलें बनाईं।
गौड़ा ने झीलों के निर्माण के लिए अपने जीवन भर की बचत खर्च कर दी।

· प्रकृति व जीव-जन्तुओं के प्रति उनका प्रेम:-
जब लोग कामे गौड़ा ज़मीन खोदते देखते थे तो लोग उन पर हँसते थे और उन्हें पागल कहते थे।
फिर भी वह जल योद्धा के रूप में प्रतिष्ठित होकर आगे बढ़ते रहे।
कर्नाटक के कामे गौड़ा ने 16 से ज़्यादा झीलें बनवाकर मानव व जीव-जन्तु जीवन पर एक भारी संकट खत्म कर दिया।

· झीलें बनाने के लिए उन्हें कहाँ से प्रेरणा मिली?

कामे गौड़ा को पीने का पानी आसानी से उपलब्ध नहीं था।
यहां तक कि उन्हें पराये घर से पानी मांगते हुए भी काफी दूर तक चलना पड़ता था।
इससे उन्हें यह सोचने पर मजबूर होना पड़ा कि पानी के अभाव में पशु-पक्षी क्या करते होंगे और इस तरह उन्होंने शुरुआत की।
आलोचना से ज़रा भी प्रभावित न होते हुए उन्होंने अपना काम जारी रखा।
17 अक्टूबर को उनके गांव में उनका निधन हो गया।
सीएम बसवराज बोम्मे ने कामे गौड़ा को श्रद्धांजलि दी और उनके प्रयासों की सराहना की।

· क्यों कहा जाता है उन्हें आधुनिक भागीरथ?

कामेगौड़ा, जिन्हें "कर्नाटक के तालाब पुरुष" के नाम से जाना जाता था, का 86 वर्ष की आयु में निधन हो गया।
उन्होंने तालाबों का निर्माण करके जल संरक्षण की दिशा में अपने प्रयासों के लिए प्रधान मंत्री नरेंद्र मोदी से प्रशंसा अर्जित की थी।

पीएम मोदी ने कुछ साल पहले अपने 'मन की बात' कार्यक्रम में उनके प्रयासों के लिए उन्हें बधाई दी थी।
कामे गौड़ा ने 17 से अधिक तालाब बनवाए और कर्नाटक के मांड्या जिले के मालवल्ली तालुका में अपने गांव के पास बंजर पहाड़ियों में 2,000 से अधिक पेड़ लगाए।
कहा जाता है कि मालवल्ली क्षेत्र के कई जानवरों और पक्षियों को इन तालाबों से लाभ हुआ है।
श्री कामेगौड़ा को उनकी पर्यावरण सक्रियता के लिए स्थानीय ग्रामीणों द्वारा 'आधुनिक भगीरथ (आधुनिक भागीरथ)' के नाम से भी जाना जाता था।

· **प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी द्वारा की गयी उनकी सराहना :-**
2020 में, प्रधान मंत्री नरेंद्र मोदी ने "मन की बात" के अपने मासिक संस्करण के दौरान उनके प्रयासों को मान्यता दी। उन्होंने उनके प्रयासों की सराहना करते हुए उन्हें "जल योद्धा" कहा।

▪**भारतीय मार्शल आर्ट -:** कलारीपयट्टू
▪**राज्य:** केरल

परिचय -: कलारिपयट्टु दक्षिणी राज्य केरल से उत्पन्न भारत की एक युद्ध कला है। संभवतः सबसे पुरानी अस्तित्ववान युद्ध पद्धतियों में से एक, कलारिपयट्टु को अंग्रेजी में (mother of all martial arts) कहकर सम्मान दिया जाता है, जिसका अर्थ है सभी युद्ध कलाओं की माता या माँ।
कलारिपयट्टु केरल में और तमिलनाडु व कर्नाटक से सटे भागों के साथ ही पूर्वोत्तर श्रीलंका और मलेशिया के मलयाली समुदायों के बीच प्रचलित है। इसका अभ्यास मुख्य रूप से केरल की योद्धा जातियों जैसे नायर, एज्हावा द्वारा, किया जाता था।

· **कलारीपयट्टू -:**
कलारीपयट्टू की उत्पत्ति केरल में हुई है और इसे खेलने वाले पूरे विश्व में हैं। कलारीपयट्टू को कई देशों में परफॉर्म किया जा चुका है यहां तक कि बॉलीवुड अभिनेता विद्युत जामवाल भी इसमें माहिर हैं।
यह एक तरह की मार्शल आर्ट ही है और इस खेल में दो लोग मिलकर कलाबाजियां दिखाते हैं। साथ ही इस खेल में महिला और पुरुष दोनों हिस्सा लेते हैं। इसमें कई तरह की टैकनीक्स होती हैं जिसमें मैपयट्टू (फिजिकल बॉडी एक्सरसाइज), वादीपयट्टू (लकड़ियों से लड़ाई), वेरुकैयपरयोगा (हैंड एक्सरसाइज) आदि शामिल है। इसमें 8 से 16 तरह की फाइट होती है और पहले बॉडी एक्सरसाइज के बाद आगे की फाइट की जाती है। इसमें डिफेंस, अटैक की कई तरह की स्टाइल होती है।

·**कैसे होते हैं कलारिपयट्टु के करतब -:**
कलारीपयट्टू में हमले, पैर से मारना, मल्लयुद्ध, पूर्व निर्धारित तरीके, हथियारों के जखीरें और उपचार के तरीके शामिल हैं। इसके क्षेत्रीय स्वरुप केरल की भौगोलिक स्थिति के अनुसार वर्गीकृत हैं, ये हैं मलयालियो की उत्तरी शैली, तमिलों की दक्षिणी शैली और भीतरी केरल से केन्द्रीय शैली।
उत्तरी कलारीपयट्टू कठिन तकनीक के सिद्धांत पर आधारित है, जबकि दक्षिणी शैली मुख्यतः नर्म तकनीकों का अनुसरण करती है, हालांकि दोनों प्रणालियां आंतरिक और बाह्य अवधारणाओं का उपयोग करतीं हैं।

· **कलारीपयट्टू का इतिहास -:**
गाये जाने वाले लोकगीत लगभग 3000 साल पहले कलारीपयट्टू के सृजन का श्रेय हिंदू देवताओं को देते हैं। ये कला कम से कम 12वीं सदी पुरानी है।

कलारीपयट्टू 9वीं सदी में और विकसित हो गया और नायर समुदाय जो केरल के योद्धा थे, इसका अभ्यास राजा और राज्य की रक्षा के लिए करते थे।
11वीं और 12वीं सदी में केरल छोटी-छोटी रियासतों में विभाजित था, जो आपस में मल्लयुद्ध लड़ा करते थे। इन द्वंद युद्धों या अंकम को चेकावर द्वारा एक अंकथात्तु नाम के चार से छः फीट ऊंचे एक अस्थाई मंच पर लड़ा जाता था। नगर शासक की सेवा के लिए युद्ध कला का अभ्यास करने का अधिकार और कर्तव्य अधिकांशतः नायर और एज्हावा के साथ जुड़ा था। उत्तर केरल के लोहार बौद्ध योद्धा थे जो कलारीपयट्टू का अभ्यास करते थे।
कलारीपयट्टू में सार्वजनिक रूचि का पुनरुत्थान 1920 के दशक में सम्पूर्ण दक्षिण भारत में पारंपरिक कलाओं के पुनराविष्कार की लहर के रूप में शुरू हुआ। 1970 तक यह दुनिया भर में युद्ध कला में रूचि के बढ़ने तक जारी रहा। हाल के वर्षों में, अंतर्राष्ट्रीय और भारतीय फिल्मों जैसे इंडियन (1996), अशोका (2001), द मिथ (2005), द लास्ट लीजन (2007)विधुत जामवाल की जंगली(2019) फ़िल्म और जापानी अनिमे/मंगा श्रृंखला में कलारीपयट्टू के शामिल होने के साथ इस कला को और लोकप्रिय बनाने का प्रयास किया जा रहा है।

· **कलारीपयट्टू प्रशिक्षुओं का दीक्षा समारोह -:**

कलारीपयट्टू के छात्रों के प्रशिक्षण की शुरुआत लगभग सात वर्ष की उम्र में होती है, जिसमे गुरुकुल द्वारा औपचारिक दीक्षा रीति की जाती है। नए सत्र के उद्घाटन के दिन, एक नौसिखिये (ज़्यादातर नायर पुराने समय में एज्हावा) को गुरुकुल या एक वरिष्ठ छात्र की उपस्थिति में कलारी में भर्ती किया जाता है और उन्हें चौखट के आर-पार दाहिने पैर को रखने का निर्देश दिया जाता है।
छात्र दाहिने हाथ से मैदान को छूता है और फिर सम्मान की निशानी के रूप में माथे पर लगाता है। उसे फिर गुरुथारा की ओर ले जाया जाता है, जहां एक दीपक कलारी के सभी गुरुओं के सम्मान में जला कर रखा होता है, इस पूजा की विधि को दोहराने के लिए फिर वह गुरु को पान के पत्ते में रख कर दक्षिणा स्वरुप कुछ धन पेश करते हैं और दंडवत हो कर, गुरु के पैर छूते हैं, जो समर्पण का द्योतक है। फिर गुरु शिष्य के सिर पर हाथ रख कर आशीर्वाद देता है और उसके लिए प्रार्थना करता है। ये अनुष्ठान - जमीन छूना, पुत्तरा, गुरुथारा और गुरु के पैर छूना हर रोज़ दोहराया जाता है। यह देवा, कलारी और इस कला में पूर्ण समर्पण और गुरु की स्वीकृति का प्रतीक है।
· कलारीपयट्टू में प्रयोग होने वाले हथियार -:
हालांकि अब अभ्यास सत्र में हथियारों का इस्तेमाल नहीं होता, लेकिन यह कलारीपयट्टू का एक महत्वपूर्ण हिस्सा हैं। यह उत्तरी शैली के लिए विशेष रूप से सच है जो ज्यादातर हथियार आधारित है। कुछ मध्ययुगीन संगम साहित्य में वर्णित हथियार अब अप्रचलित हो गए हैं और कलारीपयट्टू में अब बहुत कम इस्तेमाल किये जाते हैं।
कुछ महत्वपूर्ण हथियार निम्न हैं -:
·लाठी
·तलवार
·ढाल
·उरूमी
· **कलारीपयट्टू के अभ्यास के चरण-:**

·**कालकल -:**
कालकल का शाब्दिक अर्थ है पैर।
कलारी के सन्दर्भ में ये पैर के प्रहार और लचीलापन बढ़ाने के लिए पैर उठा कर किये जाने वाले अभ्यास काल एदुप्पू के रूप में जाना जाता है।

·पाद चक्रम (पैर की घुमावदार चोट- अंदर से बाहर की ओर)

·पाद भ्रमणं (पैर की घुमावदार चोट- बाहर से अंदर की ओर)
·नेर काल (पैर की सीधी चोट)
·कोना काल (दाएँ से बाएँ, बाएँ से दाएँ, पैर की चोट)
·वीथी काल (पैर की घुमावदार चोट -अंदर से बाहर)
·नेर-कोना-वीथी काल (पैर की संयुक्त चोट)
·थिरिची काल (दोनों ओर पैर की चोट - सीधी पैर की चोट फिर घूम कर पैर की चोट)
·आगा काल (पैर की घुमावदार चोट - बाहर से अन्दर)
·इरुथ्थी काल (पैर की चोट करना और बैठ जाना)
·इरुथ्थी काल 2 (पैर की चोट करना और बैठ जाना- मुड़ना और बैठ जाना)

· **कैकुथ्थिप्पयाट्टू -:**

कैकुथ्थिप्पयाट्टू, काई (हाथ)), कुथ्थी (मारना) और पयाट्टू (व्यायाम) का एक संयुक्त शब्द है। तुलुनादन वंश से शुरू हुआ, यह सभी दूसरी शैलियों में अपनाया गया है। इसमें घूंसे मारना, पैर की चालों, खिचांव, घुमाव और उछाल को एक विशिष्ट क्रम में किया जाता है। यह मुक्कट्टू या शरीर को गर्म करने के बाद किया जाता है। कलारीपयट्टू के दूसरे अभ्यासों की तरह कैकुथ्थिपयाट्टू को 18 चरणों में विभाजित किया गया है और इसकी जटिलता चरणों के साथ-साथ बढ़ती जाती है।

· **चुमत्तादी-:**

चुमत्तादी सभी ओर से आये विरोधियों पर हमले और रक्षा करना सिखाता है। ये 18 चरणों में विभाजित है और इसमें घूंसे, काट, उछाल और रोक शामिल हैं। इसकी हरकत चारों दिशाओं में होती है। इस अभ्यास का प्रयोग बहुत तीव्र गति और शक्ति के साथ किया जाना चाहिए।

· **मेईपयाट्टू -:**

मेईपयाट्टू लचीलेपन पर केंद्रित है। ये भी 18 चरणों में विभाजित है, यह अभ्यासकर्ता को आक्रामक बनाता है और उसकी युद्ध की जागरूकता को बढ़ाता है। इस कसरत का अभ्यास गति और चपलता के साथ किया जाना चाहिए।

· **अदिथादा -:**

अदिथादा, चोट पहुचाने (अदि) और रोक पैदा करने (थाड़ू) शब्दों से आता है। ऊपर वर्णित अभ्यासों के विपरीत, अदिथादा के लिए दो या अधिक प्रशिक्षुओं की आवश्यकता होती है। जब एक प्रतिपादक हमला करता है, तो दूसरा रोकता है और फिर जवाबी हमला करता है।

· **ओत्तोथारम -:**

हमले को रक्षा की तरह कैसे इस्तेमाल करना है ये ओत्तोथारम सिखाता है। जैसा कि अदिथादा के साथ होता है, इसका अभ्यास दो प्रतिपादकों के द्वारा किया जाता है, लेकिन छात्रों के अनुभव के साथ इस संख्या को बढ़ाया जा सकता है।

▪ **त्योहार :-** टुसू परब या मकर संक्रांति
[त्याग और बलिदान का पर्व]
▪**राज्य :-** पश्चिम बंगाल
▪**त्योहार का महीना :-** 14 जनवरी
·**टुसू पर्व :** टुसू पर्व झारखंड के कुड़मी और आदिवासियों का सबसे महत्वपूर्ण पर्व होने के साथ-साथ एक धर्मनिरपेक्ष त्योहार भी है और झारखंड में सभी जातियों और धर्मों के लोगों द्वारा मनाया जाता है, जैसे कि ईसाई, हिंदू, गैर-हिंदू, आदिवासी, सभी। टुसू मुख्यत : भूमिज, कोरा, मुंडा, संथाल, खड़िया, हो, गोंड, चिक बड़ाइक, उरांव, खेरवार, माहली, लोहरा, सबर, करमाली, कुड़मी महतो, लोधा, बागाल, भुइंया, गोंझू और अन्य समुदायों द्वारा धूमधाम से मनाया जाता है। टुसू पर्व को तीन प्रमुख नामों से भी जाना जाता है - टुसू परब, मकर परब और पौष परब।
·झारखंड में टुसू पर्व के रुप में मनाते हैं मकर संक्रांति:-
सूर्य के उत्तरायण यानी सूर्य का धनु राशि से मकर राशि में प्रवेश शुभ माना जाता है। इसी दौरान दिन बड़े होने लगते है अतः इस दिन प्रमुख पर्व के रुप में मकर संक्रांति का त्यौहार मनाया जाता है। मकर संक्रांति का पर्व पूरे देश में अलग-अलग नामों से मनाया जाता है। इसी क्रम में झारखंड में मकर संक्रांति को टुसू पर्व या मकर पर्व के नाम से मनाया जाता है। खेतों में तैयार हुई नई फसल के स्वागत में जब भारतवर्ष के अधिकांश लोग मकर सक्रांति का त्यौहार मनाते है तब जंगलों और पहाड़ों के राज्य झारखण्ड के ग्रामीण, आदिवासी अपनी बेटी टुसू मनी के बलिदान की याद में राज्य का पारंपरिक त्यौहार टुसू मनाते हैं। टूसू का शाब्दिक अर्थ कुंवारी है, इस त्योहार के पीछे मान्यता और कहानी है। इस पर्व का झारखंड में विशेष महत्व है।यह मुख्य रूप से झारखंड का त्यौहार है, लेकिन उड़ीसा और बंगाल में भी इसकी धूम होती है।
आज झारखंड के आदिवासियों के साथ ही अन्य जनजाति के अलावा क्षेत्र के अन्य लोग भी इसे मना रहे हैं।
·टुसू पर्व कब मनाया जाता है?
टुसू पर्व झारखंड के पंचपरगना का सबसे महत्वपूर्ण पर्व है। यह जाड़ों में फसल कटने के बाद 15 दिसंबर से लेकर मकर संक्रांति तक लगभग एक महीने तक मनाया जाता है।
टुसू एक फसल उत्सव है जो सर्दियों के दौरान पौष महीने के आखिरी दिन में मनाया जाता है । यह अविवाहित लड़कियों के लिए भी है | लड़कियां लकड़ी/बांस के फ्रेम को रंगीन कागज से सजाती हैं और फिर उसे पास की पहाड़ी नदी में प्रवाहित कर देती हैं।
·**पीढ़ियों से चली आ रही परंपरा इस पर्व का सबसे बड़ा आधार :-**
झारखंड में ज्यादातर पर्व त्योहार प्रकृति से जुड़े हैं। टुसू पर्व के संबंध में ज्यादा लिखित दस्तावेज़ मौजूद नहीं है। पीढ़ियों से जो परंपरा और कहानी चली आ रही है वही एक बड़ा आधार है। इस त्योहार के दिन पूरे कुड़मी, आदिवासी समुदाय द्वारा नाच-गानों और मकर संक्रांति पर सुबह नदी में स्नान कर उगते सूरज की प्रार्थना करके टुसू की पूजा की की जाती है। इस त्योहार के माध्यम से साल की नयी शुरुआत और बेहतरी की कामना की जाती है।
·**टुसू पर्व से संबंधित लोक कथा :-**
टुसू से संबंधित कई लोक कथाएँ प्रचलित हैं जिनमें से एक निम्न है:-
सैकड़ों वर्ष पहले भारत के मयूरभंज जिले के चरकुडीह गांव के चाकू महतो की एक बहुत ही सुंदर और सुशील कन्या थी, नजिसका नाम टुसू था। उसकी सुंदरता का बखान पूरे इलाके में था। इस इलाके का राजा अंदर ही अंदर कुपित हो रहा था। उस जमाने में सिर्फ राजा-महाराजा परिवार की बहू-बेटियाँ ही खूबसूरत हुआ करती थी।
टुसू की सुंदरता को राजा हजम नहीं कर पा रहा था। ऐसे में वो टुसू को अपना बनाना चाहता था अतः उसने खुसी से अपनी शादी की घोषणा पूरे इलाके में करा दी। इस घोषणा के बाद कुरमी समाज के लोग आक्रोशित हो गए। आनन-फानन में एक आपात बैठक बुलाई गई। इसमें तय हुआ कि राजा की इस कायरता का जवाब हर हालत में दिया जाएगा।

इसके बाद राजा और समाज के लोगों में जमकर संघर्ष हुआ स्वर्णरेखा नदी के किनारे सतीघाट के मैदान बारेंदा गांव के राजा और समाज के लोगों में जमकर लड़ाई हुई। इस लड़ाई में कुरमियों की सेना को कमजोर पड़ता देख टुसू को दुखी हुई और वह स्वर्णरेखा नदी में यह कह कर कूद गयी कि मां अपनी बच्ची को अपनी कोख में समा लो और अपनी संतान की रक्षा करना।

टुसू के स्वर्णरेखा नदी में कूदते ही लड़ाई बंद हो गयी और चारों और मायूसी छा गई। इस घटना के बाद सब एक-दूसरे को देखते रहे। इस घटना के बाद राजा को अपनी गलती का एहसास हुआ। उसने अपनी गलती स्वीकारते हुए सबसे माफी मांगी। राजा ने टुसू के पिता चरकु महतो से माफी मांगते हुए कहा कि आज से उस गांव का नाम चरकुडीह होगा तथा वह उस गांव का मालिक होगा।

यही नहीं, लोग प्रत्येक साल लोग स्वर्णरेखा नदी में नहा कर टुसू को श्रद्धांजलि देने लगे। इससे धीरे-धीरे टुसू मेला की शुरुआत हुई। प्रत्येक साल सतीघाट में मेला लगता है और इलाके में 13 जनवरी से 15 फरवरी के बीच में टुसू मेला का आयोजन किया जाता है। यह महोत्सव झारखंड के अलावा पश्चिम बंगाल, ओड़िशा और असम में मनाया जाता है। यह ऐतिहासिक मेला / महोत्सव है, जिसमें त्याग और बलिदान की भावना है। इस महोत्सव में सभी जाति-जनजाति के लोग शामिल होते हैं और अपनी एकता का परिचय देते हैं।

·ऐसे मनाते हैं टुसू पर्व:-

झारखंड खासकर ग्रामीण क्षेत्रों में मकर संक्रांति से करीब एक माह पहले पौष माह से ही टुसू मनी की मिट्टी की मूर्ति बना कर उसकी पूजा शुरू हो जाती है। मकर संक्रांति के दिन इस पर्व का समापन मूर्ति को स्थानीय नदी में प्रवाहित कर किया जाता है। इस दौरान टुसू और चौड़ल (एक पारंपरिक मंडप) सजाने का काम भी होता है। इस काम को केवल कुंवारी लड़कियां ही करती हैं। विसर्जन के लिए नदी पर ले जाने के दौरान स्थानीय लोग टुसू के पारंपरिक गीत गाते और नाचते हुए चलते हैं।टुसू पर्व के दौरान जगह-जगह पर मुर्गा लड़ाई की प्रतियोगिता भी होती है। मकर परब के दिन से महीनों तक झारखंड, पश्चिम बंगाल और ओडिशा में नदी तटों पर टुसू मेला का आयोजन किया जाता है ।

·इस दिन बनता है खास व्यंजन:-

इस मौके पर स्थानीय लोग अपने घरों में गुड़, पीठा और चावल अादि बनाते हैं। व्यंजन में नारियल का भी प्रयोग होता है।

▪भारतीय मार्शल आर्ट व नृत्य :- थांग-ता

▪राज्य :- मणिपुर

· परिचय :-

मणिपुर, पूर्वोत्तर भारत का भव्य राज्य स्वदेशी संस्कृतियों और जनजातियों से भरा है और प्राचीन मैतेई संस्कृति के अवशेषों का घर है!

थांग-ता तलवार (थांग) और भाले (ता) से लड़ने की कला मणिपुरी संस्कृति का एक ऐसा अविभाज्य हिस्सा है जो धीरे-धीरे वैश्विक मंच पर अपनी जगह बना रहा है।

थांगता एक मार्शल आर्ट है। मणिपुर की प्राचीन लोक युद्ध कलाओं में यह शामिल है। यह देश में 1990 से खेला जा रहा है। इसे इंडियन ओलंपिक एसोसिएशन से मान्यता प्राप्त है।

थांग-ता आर्ट को खेलों इंडिया गेम्स 2023 में भी शामिल किया है। थांग-ता लगभग 400 साल पहले मणिपुर के राजा-महाराजाओं ने शुरू किया था। हालांकि, इस खेल की कहानी काफी रोचक है। तलवार और भाले के साथ खेले जाने वाले इस खेल पर अंग्रेजों ने बैन लगा दिया था।

थांग-ता खेल में भाले और तलवार का उपयोग होता है अतः अंग्रेजों को डर था कि कहीं इसके दम पर लोग ब्रिटिश हुकूमत का सामना न करने लगें। इसी कारण उन्होंने इस खेल पर बैन लगा दिया गया था।

मणिपुर के स्थानीय लोगों ने अपने प्रयासों से न केवल इस आर्ट को पुनर्जीवित किया है, बल्कि खेलो इंडिया तक पहुंचा दिया है।

हालांकि, यह खेल अपना अस्तित्व बनाए रखने में सफल रहा है।

· क्या है थांग-ता ?

थांग-ता, एक पारंपरिक मणिपुरी मार्शल आर्ट सिर्फ एक खेल या बचाव की तकनीक नहीं है।

थंग-ता की गतिविधियाँ एक मानचित्र हैं जिसके साथ देवताओं ने इस ब्रह्मांड का निर्माण किया।

थांग-ता भारत में एक अनोखा मार्शल आर्ट्स है जिसे मणिपुर का मार्शल आर्ट्स कहते हैं।

इसका अर्थ होता है तलवार और भाला चलाने की कला।

इस कला को हुयेन लालॉन्ग (Huyen Lallong) यानी "सुरक्षित-रक्षा की विधि" के रूप में भी जाना जाता है।

मणिपुर का अनोखा मार्शल आर्ट लड़ाई का एक तरीका ज़रूर है, पर इसे देखने से ऐसा लगता है जैसे लड़ाके, तलवार-भालों के साथ डांस कर रहे हैं। इसमें लड़ने के साथ योद्धा, लयबद्ध (Martial Arts with rhythmical movement) तरीके से मूवमेंट करते हैं, जो इन्हें सबसे अलग बनाता है।

मणिपुर की यह मार्शल आर्ट पिछले कुछ दशकों के दौरान लुप्त होती जा रही है, लेकिन खेलो इंडिया यूथ गेम्स-2021 की मदद से इसे एक बार फिर राष्ट्रीय पहचान मिली।

यह कला आत्मरक्षा, एवं युद्ध कला के साथ-साथ पारम्परिक लोक नृत्य के रूप में भी जानी जाती है।

साथ ही इसका सांस्कृतिक महत्व भी है और बताया जाता है कि इसकी शुरुआत 1891 में हुई थी।

· थांग-ता की उत्पत्ति से संबंधित पौराणिक कथाएँ :-

पौराणिक कथाओं के अनुसार थांग-ता की उत्पत्ति एक प्राचीन मार्शल आर्ट थेंगौ से हुई थी। भगवान अतिया कुरु सैदाबा ने अपने बेटे अशीबा (सनामाही) को बनाया और उसे ब्रह्मांड को डिजाइन करने का निर्देश देकर अपना मुंह खोला जहां अशीबा ने पूरे ब्रह्मांड को देखा। अपने पिता के अंदर की नसों को देखकर अशीबा ने ब्रह्मांड और थेंगौ मार्शल आर्ट की गतिविधियों को भी डिजाइन किया जिससे थांग-ता आया।

पुराने दिनों में थांग-ता का उपयोग अंतर-कबीले के युद्धों के दौरान और जंगली जानवरों, विशेषकर बाघों से बचाव के लिए किया जाता था।

इस कला को सीखना हर किसी के लिए अनिवार्य था लेकिन वर्तमान में थांग-ता का अभ्यास मुख्य रूप से तीन तरीकों से किया जाता है।

थांग-ता को 3 रूपों में वर्गीकृत किया गया है अनुष्ठानिक, प्रदर्शन और वास्तविक युद्ध ।

अनुष्ठानिक चरण पखंगबा सांप की पौराणिक कहानी से हैं । सांप पखंगबा भगवान पखंगबा का अवतार है और थांग-ता में इस्तेमाल की जाने वाली गतिविधियां इस सांप की नकल हैं।

पुराने दिनों में इन साँप की गतिविधियों का उपयोग अनुष्ठानिक प्रथाओं में बुराई को दूर करने के लिए किया जाता था।

युद्ध और युद्ध तकनीकों को एक प्रदर्शन की तरह प्रस्तुत किया जाता है। यह प्रदर्शन आत्मरक्षा के कौशल को प्रदर्शित करता है जो हथियारों के उपयोग के साथ या बिना हथियारों के उपयोग के हो सकता है।

यह कला भौतिक संस्कृति की एक विस्तृत प्रणाली है जिसमें सांस लेने के तरीके, ध्यान और अनुष्ठान शामिल हैं।

· थांग-ता में उपयोग होते हैं तीन तरीके -:

थांग ता का अभ्यास तीन अलग-अलग तरीकों से किया जाता है। पहला तरीका 'तांत्रिक' प्रथाओं से संबंधित एक पूर्ण अनुष्ठान है। दूसरे तरीके में तलवार और भाला नृत्य से युक्त एक शानदार प्रदर्शन शामिल है, जिसे युद्ध अभ्यास में परिवर्तित किया जा सकता है। तीसरा तरीका वास्तविक लड़ाई की तकनीक है।

· थांग-ता के प्रसिद्ध गुरु -:

15 अप्रैल,1936 को मणिपुर में जन्मे गुरुमायुम गौरकिशोर शर्मा मणिपुर के एक प्रतिष्ठित थांग-ता के गुरु हैं। उन्होंने केइराओ में अपने घर के पास एक स्कूल की स्थापना की और इस कला को सीखने में रुचि रखने वालों को प्रशिक्षण दिया। 1983 में वह मणिपुरी मार्शल आर्ट के क्षेत्र में राष्ट्रीय संगीत नाटक अकादमी पुरस्कार प्राप्त करने वाले पहले मणिपुरी बने। इस क्षेत्र में उनके उत्कृष्ट योगदान के लिए मणिपुरी साहित्य परिषद ने 1985 में उन्हें 'कला रत्न' उपाधि से भी सम्मानित किया।

· **थांग-ता मार्शल आर्ट्स के साथ डांस भी -:**

थांग-ता शैली शरीर को कॉयल जैसा बनाने पर जोर देती है।

शरीर को ग्राउंड तक ले जाते हैं और फिर शरीर में स्प्रिंग एक्शन पैदा होता है जिसकी मदद से शरीर हवा में उछलता है और फिर योद्धा हमला करता है।

शरीर को ओपन कर के हमला करने की कला इसमें शामिल है।

अंग्रज़ी शासन के वक्त हर परिवार में से एक व्यक्ति को लड़ाई का ये तरीका सिखाया जाता था, चाहे पुरुष या स्त्री, दोनों को ही प्राथमिकता दी जाती थी जिससे वो परिवार की हिफाजत कर सके। इसके स्टेप डांस जैसे लगते हैं पर युद्ध करने में उपयोगी हैं।

· थांग-ता कला सीखने हेतु यह है अनिवार्य -:

थांग-ता सीखने के लिए अत्यधिक अनुशासन, ईमानदारी और गुरु के प्रति सम्मान सबसे महत्वपूर्ण गुण है। थांग-ता में दीक्षा प्रक्रिया में छात्रों को शिक्षक से अनुमति लेनी होती है और यह बिना किसी हथियार के बुनियादी प्रशिक्षण के साथ शुरू होता है। थांग-ता की गतिविधियों को एक सरल प्रतीत होने वाले आरेख का उपयोग करके सही किया जा सकता है और शिक्षार्थी युद्ध के लिए पूरी तरह तैयार हो जाते हैं।

· **वर्तमान समय में थांग-ता :-**

आधुनिक समय में थांग-ता को राष्ट्रीय और वैश्विक स्तर पर खेला जाता है, जहां चमड़े से ढकी लकड़ी की तलवार को एक हथियार के रूप में उपयोग किया जाता है। एक अन्य प्रकार में तलवार के साथ ढाल का उपयोग होता है। खेल के बिना थांग-ता को दुनिया भर में नहीं फैलाया जा सकता था।

मार्शल आर्ट विदेशों से आकर हमारे देश में एक खेल के रूप में स्थापित हो चुका है। ऐसे में भारतीय फेडरेशन के प्रेम कुमार ने थांग-ता को भी एक खेल के रूप में स्थापित करने का मन बनाया। उन्होंने तलवार की जगह एक छड़ी का इस्तेमाल किया और भाले की जगह ढाल को दे दी। धीरे-धीरे मणिपुर में इसके आयोजन शुरू हुए और अब यह देश के अलग-अलग हिस्सों में खेला जा रहा है।

1990 से शुरू हुआ थांग-ता का सफर अब जाकर कहीं सफल हुआ है। 1993 में इसकी राष्ट्रीय चैंपियनशिप आयोजित हो चुकी है। 2011 में इस खेल की विश्व चैंपियनशिप आयोजित की गई। इस प्रतियोगिता में कुल छह देश शामिल हुए। भारत में मणिपुर के अलावा हरियाणा में यह खेल काफी लोकप्रिय है और हरियाणा के खिलाड़ी थांग ता में चार मेडल जीत चुके हैं।

खेलों इंडिया गेम्स में मणिपुर सहित कुल 22 टीमें इस खेल में हिस्सा ले रही हैं।

- **भारत की 15वीं राष्ट्रपति :-** द्रौपदी मुर्मू
- **जन्मभूमि :-** ओडिशा
- **कर्मभूमि :-** भारत
- **जन्म :-** 20 जून 1958
- **उम्र :-** 65 वर्ष
- **जन्म स्थान :-** उपरबेड़ा, मयूरभंज, ओडिशा, भारत
- **शैक्षिक सम्बद्धता :-** रमा देवी महिला विश्व विद्यालय, भुवनेश्वर

· **परिचय :-** द्रौपदी मुर्मू भारत की 15वीं और वर्तमान राष्ट्रपति के रूप में कार्यरत एक भारतीय राजनीतिज्ञ हैं। वह भारतीय जनता पार्टी (भाजपा) की सदस्य भी रह चुकी है व भारत के राष्ट्रपति के रूप में चुने जाने वाली जनजातीय समुदाय से संबंधित पहली व्यक्ति हैं। मुर्मू, प्रतिभा पाटिल के बाद भारत की राष्ट्रपति के रूप में सेवा करने वाली दूसरी महिला हैं। प्रबुद्ध सोसाइटी ने द्रौपदी मुर्मू को प्रबुद्ध महिला सम्राट से अलंकृत किया है।

· **व्यक्तिगत जीवन :-** द्रौपदी मुर्मू का जन्म 20 जून 1958 को ओड़िशा के मयूरभंज जिले के बैदापोसी गांव के एक संथाल परिवार में हुआ था। उनके पिता का नाम बिरंचि नारायण टुडु था।

उनके पिता और दादा ग्राम परिषद (ग्राम पंचायत) के पारंपरिक प्रमुख (नामित सरपंच) थे।

इनका विवाह श्याम चरण मुर्मू से हुआ व उनके दो बेटे और एक बेटी हुई। दुर्भाग्यवश उनके पति व दोनों बेटों की अलग-अलग समय पर अकाल मृत्यु हो गयी। उनकी पुत्री विवाहिता हैं और भुवनेश्वर में रहतीं हैं।
द्रौपदी मुर्मू ने एक अध्यापिका के रूप में अपना व्यावसायिक जीवन आरम्भ किया। उसके बाद धीरे-धीरे राजनीति में आ गयीं।

· **राजनीतिक जीवन :-** द्रौपदी मुर्मू ने साल 1997 में राइरंगपुर नगर पंचायत के पार्षद चुनाव में जीत दर्ज कर अपने राजनीतिक जीवन का आरंभ किया था।
उन्होंने भाजपा के अनुसूचित जनजाति मोर्चा के उपाध्यक्ष के रूप में कार्य किया है। साथ ही वह भाजपा की आदिवासी मोर्चा की राष्ट्रीय कार्यकारिणी की सदस्य भी रहीं है।
द्रौपदी मुर्मू ओडिशा के मयूरभंज जिले की रायरंगपुर सीट से 2000 और 2009 में भाजपा के टिकट पर दो बार जीती और विधायक बनीं। ओडिशा में नवीन पटनायक के बीजू जनता दल और भाजपा गठबंधन की सरकार में द्रौपदी मुर्मू को 2000 और 2004 के बीच वाणिज्य, परिवहन और बाद में मत्स्य और पशु संसाधन विभाग में मंत्री बनाया गया था
द्रौपदी मुर्मू मई 2015 में झारखंड की 9वीं राज्यपाल बनाई गई जहाँ उन्होंने सैयद अहमद की जगह ली थी। झारखंड उच्च न्यायालय के तत्कालीन मुख्य न्यायाधीश वीरेंद्र सिंह ने द्रौपदी मुर्मू को राज्यपाल पद की शपथ दिलाई थी। झारखंड की पहली महिला राज्यपाल बनने का खिताब भी द्रौपदी मुर्मू के नाम रहा। साथ ही वह किसी भी भारतीय राज्य की राज्यपाल बनने वाली पहली आदिवासी भी हैं।
द्रौपदी मुर्मू ने 24 जून 2022 में अपना राष्ट्रपति पद हेतु अपना नामांकन किया, उनके नामांकन में पीएम मोदी प्रस्तावक और राजनाथ सिंह अनुमोदक बने।

· **भारत की 15वीं राष्ट्रपति व दूसरी महिला राष्ट्रपति :-**
मुर्मू राष्ट्रपति पद को संभालने वाली ओडिशा की द्वितीय व्यक्ति हैं और देश की सबसे कम उम्र की राष्ट्रपति हैं। मुर्मू भारत की आजादी के बाद पैदा होने वाली पहली राष्ट्रपति हैं। राष्ट्रपति बनने से पहले उन्होंने 2000 से 2004 के बीच ओड़िशा सरकार के मंत्रिमंडल में विभिन्न विभागों में सेवा दी। 2015 से 2021 तक झारखंड के नौवें राज्यपाल के रूप में कार्यभार संभाला।
द्रौपदी मुर्मू का राष्ट्रपति पद 25 जुलाई 2022 को शुरू हुआ, जब उन्होंने भारत के 15वें राष्ट्रपति के रूप में शपथ ली, जिसे मुख्य न्यायाधीश एनवी रमना ने प्रशासित किया।
राष्ट्रपति द्रौपदी मुर्मू को 64% (6,76,803) वोट मिले थे।

▪चंद्रयान-3
▪भारतीय अब चांद पर
·इसरो का उदय
सन् 1950 में जब युएस और सोवियत संघ अंतरिक्ष यात्रा की दौड़ में आगे बढ़ रहे थे,उसी समय दो महान भारतीय वैज्ञानिकों "होमी जहांगीर बाबा" और "विक्रम साराभाई" के द्वारा "इसरो"की स्थापना का बीज बोया गया।
इसरो का पूरा नाम "भारतीय अंतरिक्ष रिसर्च संगठन" है।
इसरो (ISRO) भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संगठन है जो भारतीय अन्तरिक्ष अनुसंधान के क्षेत्र में काम करता है। यह 1969 में स्थापित किया गया था।
इसरो विभिन्न विभागों और केंद्रों के माध्यम से विभिन्न प्रकार के अंतरिक्ष मिशनों का नियोजन और प्रायोजन करता है। इसका पहला मिशन था वायुयान-1, जिसने 1980 में अंतरिक्ष में प्रेषित किया था।
भारतीय वैज्ञानिकों के सतत् प्रयास से आज इसरो ने चार विश्व रिकॉर्ड हासिल कर पूरी दुनिया से भारत को सम्मान प्राप्त करवाया है।ये चार विश्व रिकॉर्ड कुछ इस प्रकार हैं :-
1.चंद्रयान-1 द्वारा चांद पर पानी की खोज।
2.एक ही प्रयास में मंगलयान का सफल प्रक्षेपण।

3. एक ही बार में 104 सैटे लाइटों का प्रक्षेपण।
4.चंद्रयान 3 द्वारा चंद्रमा के दक्षिणी ध्रुव पर सरल व सफल लैंडिंग।
यह सभी प्रक्षेपण "सतीश धवन अंतरिक्ष केंद्र" से प्रक्षेपित किए गए जो कि "अरुणाचल प्रदेश" में स्थित है।
· चन्द्रयान क्या है ?
चंद्रयान पृथ्वी की कक्षा से परे भारत का पहला अंतरिक्ष यान मिशन है। इसका मकसद पृथ्वी के एकमात्र प्राकृतिक उपग्रह के बारे में अपने ज्ञान का विस्तार करना था।
इस मिशन की निम्न श्रृंखलाएँ हैं :-
·चंद्रयान -1 - चंद्रयान -1 "भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संगठन" के चंद्र अन्वेषण कार्यक्रम के अंतर्गत चंद्रमा की तरफ प्रक्षेपित किया जाने वाला भारत का पहला अंतरिक्ष यान था।
चंद्रमा के लिए भारत का पहला मिशन, 22 अक्टूबर 2008 को एसडीएससी शार, श्रीहरिकोटा से सफलतापूर्वक लॉन्च किया गया था।
चंद्रयान-1 ने, चन्द्रमा के रासायनिक, खनिज और फोटो-भूगर्भिक मानचित्रण के लिए चंद्रमा की सतह से 100 किमी की ऊंचाई पर चंद्रमा के चारों ओर परिक्रमा किया।
सभी प्रमुख मिशन उद्देश्यों के सफल समापन के बाद, मई 2009 के दौरान चन्द्रयान-1 की कक्षा को 200 किमी तक बढ़ा दिया गया है। चंद्रयान ने चंद्रमा के चारों ओर 3400 से अधिक परिक्रमाएं की और मिशन तब समाप्त हुआ जब 29 अगस्त को अंतरिक्ष यान के साथ संचार खो गया था।
इस अभियान के अंतर्गत एक मानवरहित यान "30 अगस्त 2009" तक चंद्रमा पर सक्रिय रहा। चंद्रयान-1 के द्वारा ही "चंद्रमा पर पानी की खोज" संभव हो सकी। चंद्रयान-2- चंद्रयान-1 के बाद चंद्रमा पर खोजबीन करने वाला दूसरा अभियान चंद्रयान-2 है।भारत ने चंद्रयान-2 को "22 जुलाई 2019" को सफलतापूर्वक प्रक्षेपित किया।
चंद्रयान -2 मिशन एक अत्यधिक जटिल मिशन था, जिसने इसरो के पिछले मिशनों की तुलना में एक महत्वपूर्ण तकनीकी छलांग का प्रतिनिधित्व किया।
इसमें चंद्रमा के बेरोज़गार दक्षिणी ध्रुव का पता लगाने के लिए एक ऑर्बिटर, लैंडर और रोवर शामिल थे। मिशन को स्थलाकृति, भूकंप विज्ञान, खनिज पहचान और वितरण, सतह रासायनिक संरचना, शीर्ष मिट्टी की थर्मो-भौतिक विशेषताओं और कमजोर चंद्र वातावरण की संरचना के विस्तृत अध्ययन के माध्यम से चंद्र वैज्ञानिक ज्ञान का विस्तार करने के लिए डिज़ाइन किया गया था।
लेकिन चंद्रयान-2 का लैंडर लैंडिंग से लगभग "2.1 किमी" की दूरी पर अपने इच्छित पथ से भटक गया और अंतरिक्ष यान के साथ ग्राउंड कंट्रोल ने संचार खो दिया।
·**चंद्रयान 3 -:** चंद्रयान-3 चाँद पर खोजबीन करने के लिए भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संगठन (इसरो) द्वारा भेजा गया तीसरा भारतीय चंद्र मिशन है।
इसमें चंद्रयान-2 के समान एक लैंडर और एक रोवर है, लेकिन इसमें ऑर्बिटर नहीं है।
यह मिशन चंद्रयान-2 की अगली कड़ी है, क्योंकि पिछला मिशन सफलता पूर्वक चाँद की कक्षा में प्रवेश करने के बाद अंतिम समय में मार्गदर्शन सॉफ्टवेयर में गड़बड़ी के कारण सॉफ्ट लैंडिंग में विफल हो गया था, सॉफ्ट लैंडिंग का पुनः सफल प्रयास करने हेतु इस नए चंद्र मिशन को प्रस्तावित किया गया ।
चंद्रयान-3 का लॉन्च सतीश धवन अंतरिक्ष केंद्र (शार), श्रीहरिकोटा से 14 जुलाई, 2023 शुक्रवार को भारतीय समय अनुसार दोपहर 2:35 बजे हुआ था।
यह यान चंद्रमा के दक्षिणी ध्रुव के पास की सतह पर 23 अगस्त 2023 को भारतीय समय अनुसार सायं 06:04 बजे के आसपास सफलतापूर्वक उतर चुका है। इसी के साथ भारत चंद्रमा के दक्षिणी ध्रुव पर सफलतापूर्वक अंतरिक्ष यान उतारने वाला पहला और चंद्रमा पर उतरने वाला चौथा देश बन गया।
·**चंद्रयान-3 के मुख्य उद्देश्य :-**
इसरो ने चंद्रयान-3 मिशन के लिए तीन मुख्य उद्देश्य निर्धारित किए हैं, जिनमें शामिल हैं :-
1-) लैंडर की चंद्रमा की सतह पर सुरक्षित और सॉफ्ट लैंडिंग कराना।

2-) चंद्रमा पर रोवर की विचरण क्षमताओं का अवलोकन और प्रदर्शन।

3-) चंद्रमा की संरचना को बेहतर ढंग से समझने और उसके विज्ञान को अभ्यास में लाने के लिए चंद्रमा की सतह पर उपलब्ध रासायनिक और प्राकृतिक तत्वों, मिट्टी, पानी आदि पर वैज्ञानिक प्रयोग करना।

"तुम्हें हम सब का सलाम इसरो,
सदा ही रचा है तुमने इतिहास इसरो।
तुम पर है भारत को निज,
देश को है तुम पर अटूट विश्वास इसरो।
तुमको हम सब का नमन,
तुम्हें हम सब का सलाम इसरो।"